भाव विज्ञान

BHAV VIGYAN

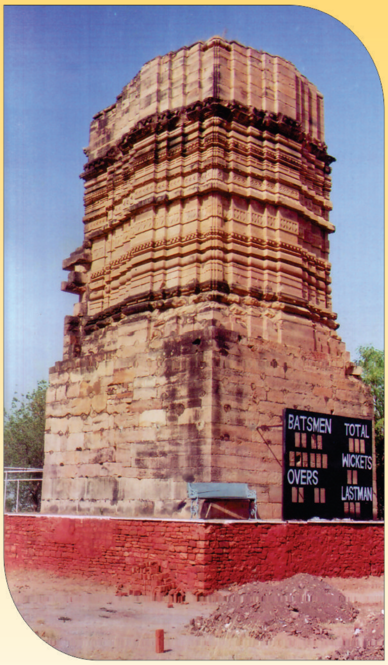

पिछला हिस्सा, वर्द्धमान जैन मंदिर,
किला परिसर, ग्वालियर

सिन्धिया स्कूल परिसर, ग्वालियर में
आठवीं सदी का प्राचीन जैन मंदिर किला दुर्ग पर

वर्द्धमान जैन मंदिर,
किला परिसर, ग्वालियर

वीर निर्वाण संवत् - 2535
मार्गशीर्ष शुक्ल पक्ष वि.सं. 2065 दिसम्बर 2008

मूल्य : 10/-

वर्ष : द्वितीय
अंक : षष्टम

विद्या वाणी

- संयम और साधना आत्मदर्शन के लिये हो, प्रदर्शन के लिये नहीं।
- साधन वही है जो साध्य को दिला दे, तप वही है जो नर से नारायण बना दे।
- साधक बनो प्रचारक नहीं
- पुण्य के उदय में समता रखना साधक की सबसे बड़ी परीक्षा है।
- जब पुरूष योगी बन जाता है तो सभी उसके सहयोगी बन जाते है।
- साधन की साधना निराकुल तथा एकाग्रपूर्वक होना चाहिये।
- अज्ञान उतना खतरनाक नहीं जितना की प्रमाद।
- मौन साधना वचन शुद्धि एवं सिद्धि का साधन है।
- साधक अपने उपयोग का उपयोग पर चिंता में नहीं करता हे। उपयोग, उपयोग में रहे यही उसका वास्तविक सदुपयोग है।
- सामयिक में साधक अकेला होता है, किन्तु प्रवृत्ति में वह समूह में होता है।
- साधना ऐसी होना चाहिये कि औदारिक शरीर ज्यों का त्यों बना रहे तथा कर्मण शरीर सूखता चला जाये।

भगवान महावीर आचरण संस्था समिति

कार्यालय : एम-8/4 गीतांजलि काम्प्लेक्स, कोटरा सुल्तानाबाद, भोपाल फोन : 0755-2673820

भगवान महावीर आचरण संस्था समिति की नींव सन् 2004 में संतशिरोमणी आचार्य श्री 108 विद्यासागर महाराज के परम प्रभावक शिष्य पूज्य मुनिश्री 108 आर्जवसागर महाराज के आशीर्वाद से हुई। इस समिति के गठन का मुख्य उद्देश्य एक ऐसे समूह को तैयार करना है जो कि जैन धर्म के मूल नियमों का पालन करता हो (रात्रि भोजन त्याग, देवदर्शन आदि)।

यह संस्था जीव दया व अहिंसा के प्रचार के साथ-साथ पशु रक्षा हेतु गौशाला के संचालन में सहयोग तथा विभिन्न नगरों में पाठशालाओं को अपग्रेड करने के साथ-साथ संचालन में सहयोग करती है। यह संस्था गौशाला तथा पशु रक्षा करने वाली संस्थाओं में समर्पित व्यक्तियों का सम्मान भी करती है। आप भी इस समिति की सदस्यता ग्रहण कर हमारे उद्देश्यों की पूर्ति में सहयोग कर सकते हैं। सदस्यता ग्रहण करने हेतु आपको एक फार्म भरना होगा जिसमें जैन धर्मों के मूल नियमों के पालन हेतु शपथ पत्र पर हस्ताक्षर करने होंगे। यदि आप इस समिति के कानूनन सहयोगी बनना चाहते हैं तो निर्धारित शुल्क जमा कर यथानुसार सदस्यता ग्रहण कर सकते हैं।

वर्ष 2004 से अब तक समिति को मुनिश्री आर्जव सागर महाराज द्वारा लिखित लगभग 12 पुस्तकों का प्रकाशन, पाठशालाओं के संचालन में सहयोग तथा मुनि संघों के प्रवास/चातुर्मास के दौरान अनेक सेवाएँ देने का सौभाग्य प्राप्त हुआ।

अभी हाल ही में भोपाल से **भाव विज्ञान** पत्रिका का प्रकाशन शुरू हुआ है इसका नवीन अंक आपके हाथों में है। इस पत्रिका का मुख्य उद्देश्य जैन धर्म के अनुसार विज्ञान की प्रगति के बारे में बताना है। हमारे मन में आने वाले धार्मिक भावों को विज्ञान से जोड़ने वाली यह पत्रिका विशेष रूप से नयी पीढ़ी के मन की धार्मिक शंकाओं को दूर करने का प्रयास करेगी। समिति के समस्त सदस्यों को भाव विज्ञान पत्रिका नियमित रूप से निःशुल्क भेजी जाती है।

सम्पर्क सूत्र :

महामंत्री	संयुक्त सचिव	कोषाध्यक्ष	उपाध्यक्ष	अध्यक्ष
अजित जैन	**अरविन्द जैन**	**अविनाश जैन**	**राजेन्द्र चौधरी**	**डॉ सुधीर जैन**
94256 01161				9425011357

सदस्य -**पवन जैन, श्रीमती संगीता जैन**

संरक्षक : श्रीमती शीलरानी नायक, पनागर, श्री राजेश जैन रज्जन, दमोह, श्री सुनील कुमार जैन, सतना, श्री महावीर प्रसाद जैन, सतना, श्री राजेन्द्र जैन कल्लन, दमोह, श्री अजित जैन, भोपाल, **आजीवन सदस्य : दमोह :** श्री मनोज जैन दालमिल, श्री महेश जैन दिगम्बर, **सदस्य : भोपाल :** श्रीमती मना जैन, श्री जिनेश जैन, श्री अनेकांत जैन, **राँची :** श्री योगेन्द्र जैन, श्री अमित लाल जैन, श्री शांतिलाल वागडिया, जयपुर, **दमोह :** श्री संजीव जैन शाकाहारी, श्री तरुण सर्राफ, श्री पदम लहरी।

शुभाशीष

संत शिरोमणि आचार्य श्री विद्यासागरजी के धर्म प्रभावक परम शिष्य परम पूज्य मुनिश्री 108 आर्जवसागर जी महाराज।

रजिस्ट्रेशन क्र. MP HIN21331/12/1/2007-TC

त्रैमासिक **भाव विज्ञान**
(BHĀVA VIJÑĀNA)

द्वितीय वर्ष
अंक षष्टम

पल्लव दर्शिका

विषय वस्तु एवं लेखक			पृष्ठ
1.	सम्पादकीय	श्रीपाल जैन 'दिवा'	2
2.	ध्यान और आलम्बन	मुनि आर्जवसागर	4
3.	मालव जी की जिज्ञासाएँ : आचार्य श्री विद्यासागर जी के समाधान		7
4.	स्वाध्याय: परमोतप:	पं. लालचन्द्र जैन 'राकेश'	11
5.	मुनि श्री आर्जवसागराष्टकम् (गुरु वन्दना)	पं. लालचन्द्र जैन 'राकेश'	12
6.	पर्यावरण रक्षक का धर्म : जैन धर्म	डॉ. राजेन्द्र कुमार बंसल	14
7.	जैन दर्शन में वैज्ञानिक विचार धारा	डॉ. नारायण लाल कछारा	21
8.	क्षमा	श्रीपाल जैन 'दिवा'	25
9.	'मूकमाटी' भावों के बिन्दु, रेखाएँ और तल	प्रो. लक्ष्मी चन्द्र जैन	26
10.	सम्यक् ध्यान शतक	मुनि श्री आर्जवसागर	32
11.	साहित्य समीक्षा	पं. लालचन्द्र जैन 'राकेश'	33
12.	परिचय गवाक्ष	पं. लालचन्द्र जैन 'राकेश'	34
13.	मुनि श्री आर्जवसागर जी महाराज	श्रीपाल जैन 'दिवा'	35
12.	इन्हें जानिये और लाभ लें		36
13.	पाठक पत्र		38
14.	समाचार		40

•परामर्शदाता•
प्रोफेसर एल.सी. जैन
दीक्षा ज्वेलर्स के ऊपर, सराफा, जबलपुर
मोबा.: 94253 86179

•सम्पादक•
श्रीपाल जैन 'दिवा'
शाकाहार सदन
एल-75, केशर कुंज,
हर्षवर्द्धन नगर, भोपाल-3 (म.प्र.)
फोन-4221458, 9893930333, 9977557313

•प्रबंध सम्पादक•
डॉ. सुधीर जैन
प्राध्यापक, शास. महारानी लक्ष्मीबाई
कन्या स्नातकोत्तर महा., भोपाल
मो. - 0755–257788, 9425011357

•सम्पादक मंडल•
डॉ. सी. देवकुमार, नई दिल्ली
पं. जय कुमार 'निशांत', टीकमगढ़ (म.प्र.)
अजित कुमार जैन, भोपाल (म.प्र.)

•कविता संकलन•
पं. लालचंद जैन 'राकेश'
गंजबासौदा

•प्रकाशक•
श्रीमति सुषमा जैन
एमआईजी-8/4, गीतांजलि काम्प्लेक्स,
कोटरा सुल्तानाबाद, भोपाल (म.प्र.)
फोन : 0755–2673820

•सदस्यता शुल्क•

परम संरक्षक	11,000/-	रु.
संरक्षक	5,000/-	रु.
विशेष सदस्य	3,000/-	रु.
साधारण सदस्य	1,000/-	रु.

कृपया सदस्यता शुल्क प्रकाशक के एवं रचनाएँ सम्पादक के पते पर भेजें।

लेखक के विचारों से सम्पादक का सहमत होना आवश्यक नहीं है।
भाव विज्ञान से संबंधित समस्त निर्णयों/न्यायों के लिए न्यायक्षेत्र भोपाल ही मान्य होगा।

सम्पादकीय

ग्वालियर में सिंधिया स्कूल के सीवर के गन्दे पानी से जैन प्रतिमाओं का दानवी अभिषेक

– श्री पाल जैन 'दिवा'

वर्षा के अभाव में जिस प्रकार फसलें सूख कर नष्ट हो जाती हैं और अकाल का सद्भाव हो जाता है वैसे ही करुणा भाव के अभाव में अहिंसा मुरझा जाती है और हिंसा फूलने-फलने लगती है। हिंसा का हाहाकार कलह के रूप में झगड़े और दंगे-फसाद के रूप में आतंकवाद और युद्ध के रूप में, सामान्य और यांत्रिक कत्लखानों के माध्यम से प्रतिदिन करोड़ों निरीह निर्दोष पशु-पक्षियों को मौत के घाट उतार कर रक्त के पनालों के रूप में दिखाई पड़ने लगता है। वर्तमान में हिंसा अपनी ऊँचाई पर है। वह अपने रक्त रंजित मुख से अट्टहास करती हुई अहिंसा और शांति का मखौल उड़ा कर गर्वित है। हिंसा के प्रभाव को प्रभाहीन करने का एक मात्र उपाय करुणा भाव है। अहिंसा धर्म है। सभी तीर्थंकरो ने परिवार समाज देश एवं विश्व में शांति स्थापित करने का एक ही उपाय अहिंसा बताया है। अंतिम चौबीसवें तीर्थंकर भगवान महावीर स्वामी ने भी जीओ और जीने दो का महान मंत्र मानवता के हित में विश्व शांति हितार्थ दिया। उनके निर्वाण के महान प्रशस्त मंगलकारी अवसर को दीप जलाकर प्रति वर्ष स्मरण किया जाता है। यह आवश्यक भी है। पर ऐसा लगता है कि भगवान महावीर के स्मरण को औपचारिकता का ग्रहण लग गया है। इसमें हमारी व्यस्तता, श्रद्धा की न्यूनता एवं परिग्रह वृत्ति की पूर्ति हित लोभ भाव की जागृति बाधक कारण है। इस पर लगाम लगा कर हम करुणा भाव एवं अहिंसा धर्म की प्रभावना के लिये विशेष प्रयास श्रावक-श्रमण सब मिल कर करें। ऐसा भी नहीं है कि प्रयास नहीं हो रहे हैं। परन्तु जैसे हिंसा के केन्द्र कत्लखाने आतंकवाद के प्रशिक्षण केन्द्र संसार में बढ़ रहे हैं वैसे करुणा के क्लब और अहिंसा के प्रशिक्षण केन्द्र मंदिर-मंदिर और अलग संस्थानों के रूप में भी खुलें। जिसके द्वार सभी धर्म एवं जाति के लोगों के लिए खुले रहें। वैसे हर जैन साधु का चातुर्मास एक विशाल अहिंसा प्रशिक्षण केन्द्र ही होता है। करुणा क्लब भी चल रहे हैं। पर इनकी संस्था ऊँट के मुँह में जीरा है आतंकवादी, नक्सलवादी प्रशिक्षण केन्द्रों की भाँति इनको चलाना पड़ेगा। प्रशिक्षणार्थियों की सम्पूर्ण व्यवस्था केन्द्रों की ओर से हो। उनको नगद छात्र वृत्ति भी प्रदान की जाय। प्रशिक्षित विद्यार्थी समर्पित विद्वान प्रचारक बन कर निकले। जो जीवन भर करुणा भाव और अहिंसा की प्रभावना में लगा रहे। परन्तु जीवन चलाने का उसका पक्का प्रबन्ध भी हो। जैसे आतंकवादियों को आर्थिक निश्चिंतता होती है, तो अहिंसा वादियों को भी आर्थिक निश्चिंतता प्रदान क्यों नहीं की जावे ?

अभी भगवान महावीर स्वामी के निर्वाण के स्मरण को औपचारिकता के ग्रहण की चर्चा की उसका एक जीता जागता उदाहरण है ग्वालियर के किले ऊपर भगवान महावीर का पचखण्डा मंदिर। जिसके परिसर को सिन्धिया स्कूल खेल प्रागंण में परिवर्तित कर तारों की जाली की बाउण्ड्री खींचकर सिन्धिया स्कूल प्रशासन ने अपने कब्जे में कर रखा है और मंदिर तक जाने का मार्ग भी बन्द कर दिया है। साथ ही घोर आपत्तिजनक सिन्धिया स्कूल के सीवर का गन्दा पानी जैन प्रतिमाओं का दानवी अभिषेक कर रहा है।

जिससे बहुमूल्य धरोहर विशाल मूर्तियों का क्षरण हो रहा है यह तुरंत बन्द होना चाहिए प्रशासन इस पर त्वरित कार्यवाही करें। इस घोर पापके पटाक्षेप से सबका मंगल होगा। अरे एक वो राजा और उसकी रानी थी जिनने अपनी महान श्रद्धावश इस मंदिर के साथ अनेक मंदिर मूर्ति बनवाकर स्थापित की और एक ये तथाकथिक राजा (अपने को मानते हैं हम राजा हैं) जिन्होंने स्वयं अतिक्रमण कर मंदिर के द्वार सदा के लिये बन्द कर दिये। मंदिर की मूर्तियों को इधर उधर करवा दिया। परन्तु द्वार पर उकरी दिगम्बर तीर्थंकर की मूतियाँ अविकल विद्यमान हैं। जो मौन रूप से प्रमाण स्वरूप है कि यह दिगम्बर जैन मंदिर, वर्द्धमान/महावीर मंदिर है। सौभाग्य से इस वर्ष आचार्य विद्यासागर जी महाराज के परम प्रभावक शिष्य मुनि श्री आर्जवसागर जी का चातुर्मास ग्वालियर में हुआ। यह सब दृश्य देखकर उन्हें वेदना हुई और उन्होंने इस मंदिर के द्वार खोलने की पहल की तथा लोगों की सुप्त आस्था को जागृत किया और उन्होंने वहाँ जाकर दर्शन करने की जोरदार पहल की। सम्पूर्ण प्रशासन सजग हुआ और मंदिर तक जाने में व्यवधान बना। फिर भी दबंगता और अभय के धनी मुनि श्री आर्जवसागर जी ने हार नहीं मानी, दर्शन करने में सफलता प्राप्त की । वर्तमान तथाकथित राजा जी भी महाराज जी की दृढ़ता, अनुशासन व दबंगता से प्रभावित हो दर्शन हेतु पहुँचे, आशीर्वाद लिया और एक घंटे चर्चा भी की और यह आश्वासन भी दिया कि मंदिर का मार्ग खुलवाने में पूरा सहयोग करूँगा। मंदिर को जैन समाज के हाथों में सौंपने में भी पूरी मदद करूँगा और तब मैं फिर महाराज श्री आर्जवसागर जी के दर्शन कर आशीर्वाद लूँगा।

यदि यह सब श्री ज्योतिरादित्य जी ने कर दिखाया तो, तो वस्तुतः जैनों के मन पर छा जायेंगे और तथाकथित राजा नहीं सच्चे राजा ही साबित होंगे। क्योंकि जो नेता जनता के मन पर छा जाये जनता का हित करे वही राजा है और यदि उनका आश्वासन वर्तमान के नेता लोगों के आश्वासन जैसा कोरा आश्वासन निकला तो काहे का राजा। फिर तो सम्पूर्ण देश व विदेश के जैन जन आन्दोलन करेंगे। ग्वालियर के महावीर मंदिर के लिए व सम्पूर्ण ग्वालियर किले में पाषाणों में उकरे जैन मंदिर व मूर्तियों के लिये। सभी श्रावक-श्रमणों से विनम्र विनंती है कि जहाँ-जहाँ आप हैं जोरदार ढंग से जागृति का शंखनाद फूँके। म.प्र. सरकार (मुख्यमंत्री), श्री ज्योतिरादित्यजी व प्रधानमंत्री भारत सरकार को पत्र लिखें और पत्र लिखने की प्रेरणा देवें। इस पत्र लिखो अभियान से मंदिर के द्वार खुलने व मंदिर सुपुर्दगी में सहयोग मिलेगा।

संसार के सभी जैन मंदिरों से अहिंसा की सीख दी जाती है करुणा की सुगंध फैलाई जाती है। शांति की बयार बहायी जाती है। मानवता का पाठ पढ़ाया जाता है। फिर जैन मंदिरों की रक्षा में बाधा क्यों? उनकी स्थापना में रुकावट क्यों? जैन धर्म की प्रभावनासे भय किस बात का? या ईर्ष्या क्यों?

सर्वधर्म समभाव के तहत जैन धर्म भी आता है। जो धर्म विश्व शांति के सूत्र देता है। विश्व शांति का मार्ग प्रशस्त करता है उसके साथ भेदभाव नहीं सद्भाव होना चाहिए। जैन सदैव भारतवर्ष का भक्त होता है वह देश प्रेमी होता है। विश्वशांति और मानवता के हित का सदैव ध्यान रखता है। सभी देशों से स्नेह करते हुए वह अपने देश को सर्वोपरि मानता है। 'वसुधैव कुटुम्बकम्' की भावना का समादर करता है। 'परस्परोपग्रहोजीवानाम' सूत्र का सम्मान करता है। 'जीओ और जीने दो' अहिंसा सूत्र का पालन करता है।

ध्यान और आलम्बन

- मुनि श्री १०८ आर्जवसागर जी

तीर्थंकर भगवान की दिव्य ध्वनि से प्राप्त श्रुत परम्परा में गृहस्थों के समीचीन व्यवहार रूप षट् कर्मो के सम्बन्ध में आचार्य पद्मनन्दी, 'पद्मनन्दी पञ्चविंशतिका' शास्त्र में कहते हैं कि-

''देवपूजा गुरूपास्ति स्वाध्याय संयमस्तपः ।
दानं चेति गृहस्थाणं षट्कर्माणि दिने दिने ।।''

देवपूजा अर्थात् वीतराग प्रभु की पूजा, जो सच्चा देव है, जिसने राग द्वेष, काम आदि को जीत लिया है, मोह, ममता से परे हो गया है, पूर्ण रूप से निर्ग्रन्थ हो गया है, अपनी आत्मा में लवलीन है संसार की चिंता नहीं है और दृष्टि भी नाशाग्रदृष्टि है। आशाओं पर दृष्टि नहीं है नाशा पर दृष्टि है ऐसे महान प्रभु की उपासना करना चाहिए। कहते हैं कि

''नाम लेता हूँ तुम्हारा, तुम याद आते हो।
मैं वह खोई हुई चीज हूँ, जिसका पता तुम हो।।''

वास्तव में भगवान की याद, भगवान की वह स्मृति अपने आपको अपने स्वरूप का याद दिलाती है। इसलिये कहते हैं कि जब ध्यान करते हैं तो प्राथमिक अवस्था में कोई न कोई आलम्बन अवश्य लेना चाहिए। वह आलम्बन इतना पवित्र-पावन-पुनीत होना चाहिए कि जिसके माध्यम से अपने विकारी भाव नष्ट हो जायें और विकारी को याद करेंगे तो विकारी भाव ही आयेंगे ये ध्यान रखना। जैसे सामने दृश्य होगा वैसा ही वातावरण बनता है रोते को देखो तो रोना आता है, हँसते को देखो तो हँसना आता है। वीतरागी को देखो तो वैराग्य आता है। अपने आप हमारे अन्दर निर्मल भाव प्रकट हो जाता है ऐसे परमात्मा को देखने से। इसलिए परम आत्मा-परमात्मा का ध्यान करना चाहिए। वह परमात्मा अपने भावों को निर्मल-परिमल बनाने वाला है। पूर्ण जगत को भी जानने वाला है। लेकिन वे किन्हीं पदार्थो के कर्त्ता-धर्ता नहीं हैं। अगर वे करने-धरने लग जायें तो वे अपने आत्म ध्यान से च्युत हो जायेंगे। और करें तो सभी को अच्छा ही करें तब तो परमात्मा हैं, जो कुछ भी करता है तो ईश्वर करता है ऐसा कुछ लोग बोलते हैं मैं उन से पूछता हूँ कि भैय्या! इस जगत में कोई सुखी, कोई दुःखी, कोई झोपड़ी में, कोई महल में, कोई लँगड़ा-लूला, अंधा काना इस प्रकार जो तरह-तरह के दुःख पा रहे हैं लेकिन उस परमात्मा ने सब को एक समान क्यों नहीं बनाया? सभी को सुखी बना देता सबको महल में रख देता और सबको सुन्दर बना देता। अगर दुःखी बना रहा है तो परमात्मा कैसा है? क्योंकि परमात्मा तो दयालु होता है। इसका मतलब है कि जो आप भी कहेंगे कि नहीं-नहीं जो दुःखी है सो कर्मों से दुःखी है। फिर जो सुखी हैं सो उसको भी कह दो कि कर्मों से सुखी हैं। जब कर्म ही है तो परमात्मा कौन हैं? परमात्मा अपने आप का कर्त्ता होता है। परमात्मा सब कुछ जानता देखता है। लेकिन किसी का कर्त्ता नहीं है। इस जगत में कर्त्ता तो ये जीव स्वयं है। कहा भी है कि-

''अपनी-अपनी दुकान है, अपना-अपना खाता।
जो जैसी करनी करता, वैसा ही फल पाता।।''

और कुछ नहीं है, इस जगत में। और भी कहते हैं कि-

''स्वयं कृतं कर्म यदात्मना पुरा,
फलं तदीयं लभते शुभाशुभम्
परेण दत्तं यदि लभ्यते स्फुटं,
स्वयं कृतं कर्म निरर्थकं तदा।।''

''सामायिक पाठ'' में कहा है कि - **स्वयं कृतं कर्म यदात्मना पुरा** अर्थात जिस आत्मा ने जो पहले कर्म किये हैं, **फलं तदीयं लभते शुभाशुभम्** उसका वह वैसा ही फल पाती है बुरा कर्म किये तो बुरा पाती है। पुण्य किया तो सुख पाती है, पाप किया तो दुःख पाती है। **परेण दत्तं यदि लभ्यते स्फुटं** दूसरे के किये गये कर्मों का फल हमें मिलने लग जाय तो **स्वयं कृतं कर्म निरर्थकं तदा** अपने किये गये कर्मों का फल निरर्थक हो जायेगा। अपना कर्म निरर्थक हो जाय ऐसा होता नहीं है। कर्म निरर्थक नहीं होते हैं वे अपने फल को देते ही हैं या वे अपने प्रभाव को दिखाते ही हैं ये हमें ध्यान रखना पड़ेंगा। इसलिए हमें अपनी करनी अच्छी करनी चाहिए। तभी हम अच्छा फल पायेंगे। कर्मों को काटेंगे तो हम मुक्ति फल पायेंगे। पुण्य सँजोओगे तो सुख पावोगे, पाप सँजोओगे तो दुःख पावोगे यह तो आगम का कथन है ही इसलिए किसी ने किया हो पाप और कोई देदे सुख और पुण्य भर दे उसमें ऐसा होता नहीं। किसी ने किया हो पुण्य और उस पुण्य में बाधक बन जाय ऐसा होता नहीं है। माँगने से नहीं मिलता है ये तो करनी का फल स्वयमेव मिलता है। इसलिए ध्यान रखना कि हमें ध्यान को इतना पावन पुनीत बनाना है कि वह ध्यान मंगलमय हो और ऐसे परमात्मा का ध्यान हो जिससे कि हम स्वयं परमात्मा बन जायें और अपने आप में लीन हो जायेंगे। तो फिर किसी परमात्मा का ध्यान नहीं करना पड़ेगा। जब तक हम अपवित्र हैं, जब तक हम संसार में हैं, जब तक हम परमात्मा नहीं बने हैं तब तक हमें किसी परमात्मा का आलम्बन करना पड़ेगा। उसके बिना हम पावन-पुनीत नहीं बन सकते हैं। अगर आप अपनी आत्मा को स्वच्छ सुन्दर बनाना चाहते हो तो आपको क्या-क्या करना पड़ेगा? तो आपको सर्वप्रथम धर्म का आलम्बन अवश्य लेना पड़ेगा। आप गृहस्थ हैं इसलिए आपको षट् कर्मों को करना अनिवार्य है जैसे कि मुनि लोग भी अपने षट् कर्मों का पालन करते हैं और अपनी आत्मा को पवित्र पुनीत बनाते रहते हैं। कभी अनजाने में भी दोष लग गये हों तो भी दूर होते रहें, क्षय होते रहें ऐसा वे पुरुषार्थ प्रयत्न करते रहते हैं और आप लोग भी ऐसा ही पुरुषार्थ किया करें। आपका भी कर्तव्य है कि अपने षट् कर्मों में लीन रहा करें। आप गंदे पानी से कपड़ा धोयेंगे तो कपड़ा और गंदा हो जायेगा। गंदे दर्पण में आप मुख देखोगे आपकी वह किट्ट कालिमा नहीं दिखने वाली है। आपका मुख साफ नहीं हो सकता क्योंकि आपको वह दिख नहीं सकता अपना दाग। ऐसे निर्मल परमात्मा रूपी दर्पण में आप अपना मुख देखेंगे जिनके पास दोष नहीं है, सब प्रकार के दोषों से परे हो गये हैं, राग, द्वेष, ममता से परे हो गये हैं ऐसे परमात्मा रूप उस दर्पण में अपना मुख या अपना वास्तविक जीवन दिखेगा और अपने आपको निर्मल बनाने का पुरुषार्थ करोगे। और गंदे दर्पण में देखेंगे तो आपको दाग ही नहीं दिखेगा। तो फिर अपने आपको साफ कैसे करोगे। अपने आपको धर्म से कैसे जोड़ोगे आप समझोगे यही सब कुछ है तो यह काम भोग, राग, द्वेष इसी को करते

चले जाओगे और समझोगे कि यही धर्म है। तो कभी धर्म के मर्म नहीं जान पायेंगे। इस प्रकार हम लोग जानें, समझें अपने जीवन को महान बनायें साथ-साथ में हम लोग अपनी आत्मा को अगर निर्मल बनाना चाहते हैं तो अपने आपको उस परमात्मा रूप महान प्रभु के चरणों में समर्पित करना पड़ेगा। देवपूजा करें, गुरु की उपासना करें, जो निर्ग्रन्थ गुरु हैं, महान आत्मा हैं ''वन्दे तद् गुण लब्धये'' गुणों की प्राप्ति के लिये उन्हें नमस्कार किया जाता है। और इसी के साथ स्वाध्याय करें शास्त्रों का अध्ययन करें। वे शास्त्र भी महान आत्माओं के द्वारा राग, द्वेष से परे आत्माओं के द्वारा विरचित हों, जिससे कि अपने आपको मोक्ष का मार्ग रूप सच्चा पथ मिल सके ।

महावीर भगवान की जय।

धर्म प्रभावना हेतु स्वर्ण अवसर

1. प्रोफेसर एल.सी. जैन द्वारा सम्पादित भारतीय राष्ट्रीय विज्ञान अकादमी (INSA) स्वयं द्वारा कार्यान्वित करणानुयोग ग्रंथों का प्रोजेक्ट जो "Exact Sciences in the Karma Antiquity" नाम से चार खंडों के सेट के रूप में प्रकाशित हुआ है, अब अत्यंत अल्प मूल्य में विक्रय अथवा संस्थाओं द्वारा क्रय हेतु उपलब्ध है। जो भी पाठक अथवा दानवीर इसी अल्प मूल्य पर देशी वा विदेशी जैन संस्थाओं के केन्द्रों पर या इंडालाजी केन्द्रों पर धर्म प्रभावना हेतु प्रेषित करना चाहें, उन्हें हर प्रकार की सुविधा उपलब्ध प्राप्य रहेगी, पोस्ट आदि करने की व्यवस्था प्रकाशक द्वारा की जायेगी।
2. इसी प्रकार प्रोफेसर एल.सी. जैन द्वारा (कर्म ग्रंथों पर) क्रियान्वित भारतीय राष्ट्रीय विज्ञान अकादमी, नई दिल्ली प्रोजेक्ट का दो खंडों में "Mathematical Sciences in the Karma Antiquity" नाम से प्रकाशित हो रही है। प्रथम खंड एक माह में प्रेस से आने वाला है, द्वितीय खंड प्रायः छः माह पश्चात् प्रेस से आने वाला है। प्रथम खंड में आर्थिक पूर्ण सहयोग श्री यशवंत कुमार जैन (ABB Limited), रायपुर ने अपने पिता की पुनीत स्मृति में दिया है जिनका जीवन परिचय आदि दो पृष्ठों में फोटो सहित दिया गया है। द्वितीय खंड हेतु भी इसका नये सहयोगी द्वारा प्राप्य है ताकि वह अपने पूज्य की स्मृति में जीवन परिचय दे सके।
3. पद्मपुराण (अंग्रेजी के साथ हिन्दी में) भी अल्पमूल्य में उपलब्ध है।

सम्पर्क : प्रोफेसर लक्ष्मीचंद्र जैन,
सचिव-निर्देशक, गुलाब रानी कर्म विज्ञान संग्रहालय,
दीक्षा ज्वेलर्स - 554, सराफा, जबलपुर - 482002
मोबाईल : 94253 86179
ई-मेल : lcjain25@rediffmail.com
वेब साइट/ब्लाग स्पाट पर भी नमूने के तौर पर देख सकते हैं।

मालव जी की जिज्ञासाएँ : आचार्य श्री विद्यासागर जी के समाधान

''दिगम्बराचार्य शिरोमणि परम पूज्य आचार्य श्री विद्यासागर जी महाराज के समक्ष प्रतिष्ठित मेधावान पत्रकार श्री रवीन्द्र मालव ने अपनी जिज्ञासाएँ रखीं जिनका समाधान आचार्य श्री ने जिस सहजता से किया वह देखने योग्य है। उन समाधानों में से कुछ यहाँ पाठकों के मार्ग दर्शन हेतु प्रस्तुत किये जा रहे हैं।

इन समाधानों में श्रावक एवं श्रमण दोनों के लिये शुभ संदेश है कि विवादों से बचते हुए धर्म प्रभावना एवं प्रशस्त कार्य एक जुटता से करते रहना चाहिए।''

- श्रीपाल जैन 'दिवा'

जिज्ञासा/प्रश्न - आचार्य श्री, किस घटना ने आपको वैराग्य की प्रेरणा दी ?

समाधान / उत्तर- अपने विषय में बताने की 'आगम' की आज्ञा नहीं है। संवेद्य को कथ्य नहीं बनाया जा सकता।

जिज्ञासा / प्रश्न - आचार्य श्री आज लोकतांत्रिक समाज में 'जनबल' या 'संख्या बल' का सर्वाधिक महत्व है, किन्तु जैन धर्मावलम्बी तो अल्पसंख्यकों में भी अल्पसंख्यक हैं। नए लोगों को जैन धर्म की परिधि में लाने, उन्हें जैन धर्म अंगीकार कराने और जैन धर्मावलम्बियों की संख्या बल बढ़ाने की ओर, किसी का कोई ध्यान भी नहीं है। न तो धर्मक्षेत्र के नेता, न ही समाज क्षेत्र के नेता, इस ओर कदापि कोई चिन्तन नहीं कर रहे हैं, जिससे सामान्य जन, जैन धर्म के प्रति आकर्षित हों।

समाधान/उत्तर - इतिहास साक्षी है कि एक समय ऐसा था जब अनेक जैन मुनि अक्सर यह संकल्प लेते थे कि वे इतने हजार या इतने सैकड़ा नए व्यक्तियों की जैन धर्म में दीक्षित करने के बाद ही आहार लेंगे और वे अक्षरशः इसका पालन भी करते थे। अनेक कथानक उपलब्ध हैं, जिनमें यह वर्णन आता है कि जैन मुनि-संघ के विहार के समय, उनकी प्रभावना से गाँव के गाँव जैन धर्म अंगीकार कर लेते थे। जैन बनाने की विधि शास्त्रों में दी है। शास्त्रों में उल्लेख है कि आचार्य जिनसेन ने कहा था कि जब आप लोग एक हजार नए जैनी बना देंगे, तभी आहार के लिए उठूँगा। जैन धर्म बहुत विशाल है, किन्तु हम संकीर्ण हो गए हैं। हमारे धर्म की विशालता का कारण इसका विशाल दृष्टिकोण है। हम जब तक गुण और दोष नहीं बताते, तब तक व्यक्ति प्रभावित नहीं हो सकते। हमें संकीर्णता को तोड़ना होगा। आज हम अपने आपको ही सँभाल नहीं पा रहे हैं। दूसरों को कैसे सँभालेंगे? आज हमारे सामने सबसे बड़ी चुनौती यह है कि हम अपने धर्मावलम्बियों में किस प्रकार आगमानुरूप आचरण का वातावरण बनाए रखें, किस प्रकार जैनों को जैन संस्कृति के अनुरूप आचरण करने और नाम से ही नहीं, आचरण से भी जैन दिखने, के कार्य को संपादित कर

पायें। तब स्वाभाविक है कि हमारा ध्यान बाहर की ओर कैसे जाए।जब घर में अमन-चैन हो, तब ही तो बाहर विस्तार पर ध्यान लगाया जा सकता है। जैन बनने से पहले नवोदित को जैन धर्म के सिद्धांतों को पूरी तरह से आत्मसात करना चाहिए। रहन-सहन, पहनावा-उढ़ावा में भी परिवर्तन करना जरूरी है। हमें तंत्र, मंत्र, यंत्र की जगह वास्तविक धर्म को समझकर अपनाना होगा। संकीर्णता को छोड़ना होगा। जैन धर्म में संख्या पर कम, गुणवत्ता पर अधिक ध्यान दिया गया है। हम आंतरिक गुणवत्ता ठीक कर लें, तो बाहरी-तत्व स्वयं हमारी और आकर्षित होंगे। हमें अपने संख्या बल का विस्तार करना है, तो यह आवश्यक है कि हम अपने कार्य, व्यवहार व आचरण से, अपनी गुणवत्ता का उदाहरण इतर समाज व संस्कृति के लोगों के सम्मुख प्रस्तुत करें, उन्हें अपनी विशालता से अवगत कराएँ। हमारे समाज का ध्यान इस ओर कदापि नहीं है, इसी कारण हम अल्पसंख्यकों में अल्पसंख्यक होते जा रहे हैं।

जिज्ञासा/प्रश्न - आचार्य श्री संकीर्णता कैसे टूटे?

समाधान / उत्तर - आप बताएँ? मारवाड़ से, राजस्थान से लोग सैकड़ों-हजारों मील दूर असम, बंगाल राज्यों में क्यों गये और वहीं क्यों बस गये? क्योंकि वहाँ व्यापार अच्छा है। हमें भी इसी तरह लक्ष्य की ओर देखना चाहिए। जैन बनाने की विधि आगम में है। किन्तु हम हैं कि खुद में टूट-फूट करते जा रहे हैं।

जिज्ञासा/प्रश्न - आचार्य श्री, समाज इस दिशा में किस प्रकार आगे बढ़ सकता है, हम क्या कर सकते हैं? हम साधर्मी बन्धुओं का सहयोग किस प्रकार कर सकते हैं? इस संबंध में आपका मार्गदर्शन समाज को नई दिशा दे सकता है?

समाधान/उत्तर - सर्वप्रथम हम यह विचारें कि क्या हम इसके योग्य हैं। हमारे यहाँ दान के चार मुख्य प्रकार बताए गए हैं- 'आश्रय दान', 'विद्या दान', 'औषधि दान' और 'आहार दान'। दुर्भाग्य से 'आश्रय दान' की प्रथा लुप्त या कमजोर हो रही है। हमारा इस ओर बहुत कम ध्यान है। समाज के जरूरतमंद और कमजोर लोगों को 'आश्रय दान' देने की प्रथा को सशक्त करने की आवश्यकता है। आज समाज 'बनियावृत्ति' में फँसा है। दान करते समय भी अक्सर यह विचार किया जाता है कि, इस कार्य में इतना दान करेंगे, तो पुण्य के रूप में, प्रतिष्ठा के रूप में या अन्यथा कितना वापिस मिलेगा? यहाँ भी लाभ वृत्ति रहती है। लाखों-करोड़ों रुपया विषयों और कषायों में बहा देंगे, पर किसी को आश्रय नहीं देंगे। लेकिन साधर्मी के संरक्षण या उत्थान में एक पैसा भी खर्च नहीं करेंगे। शास्त्रों में कहा है, एक वृक्ष लगाना सौ पुत्रों को जन्म देने के समान है। वृक्ष के पास सैकड़ों-हजारों पथिक आएँगे और ऑक्सीजन ग्रहण करेंगे। वृक्ष निष्पृह भाव से सभी को ऑक्सीजन आदि की सुविधा देते हैं। इसी तरह हम साधर्मी बन्धुओं की सहायता के लिए आगे आएँ। पेड़ से सैकड़ों लोगों को छाँह मिलती है, फल मिलते हैं। इसी प्रकार एक निराश्रित को आश्रय देने से, उसे

जीवन में आगे बढ़ने में मदद करने से, सैकड़ों पुत्रों को जन्म देने से भी ज्यादा पुण्य का संचय या अर्जन होता है। किन्तु आज यह व्यवस्था दुर्लभ हो रही है। इस दिशा में चिंतन नहीं हो रहा। हम सोचें कि क्या हमारा समाज आज 'आश्रय दान' के लिए तैयार है, 'विद्यादान' के लिए तैयार है। समाज इसके लिए स्वयं को तैयार करे, बाकी रास्ते स्वयमेव खुल जाएँगे। आपको, समाज को, स्वयं ही नई दिशा और नया रास्ता दिखने लगेगा।

जिज्ञासा/प्रश्न–राष्ट्रीय दायित्वों का निर्वहन कैसे करे? धर्म निरपेक्ष राष्ट्र में धर्म का पालन किस प्रकार होना चाहिए?

समाधान/उत्तर – महापुराण के उत्तरार्द्ध में इसका उत्तर मिलता है। राष्ट्र और समाज का संवर्धन करके ही इसका निर्वहन हो सकता है। आप लोग काम करें। इस दिशा में एक प्रतिशत भी काम नहीं हो रहा है। हम एक व्यक्ति को भी धर्मात्मा नहीं बनाते। सही आय का स्त्रोत है–'धर्म रुचि' । धर्मात्मा बनाओ। आज लोग 5–10 लाख की बोली तो ले लेते हैं, किन्तु 5–10 व्यक्तियों को धर्मात्मा नहीं बना सकते। यदि निराश्रित लोगों को आश्रय दान दिया जाए तो धर्म का संरक्षण हो सकता है। एक लाख रुपये देने से पूरे परिवार को आत्मनिर्भर बनाकर उसके गुजारे की व्यवस्था की जा सकती है। इस तरह पाँच लाख देने पर पाँच परिवार धर्मात्मा बन जाएँगे। आचार्य समन्तभद्र स्वामी ने कहा है –

'स्वयूथ्यान प्रतिसदभाव सनाथापेत केतवा। प्रतिपत्तिर्यथायोग्यं, वात्सल्यममि ष्ठये।। अर्थात अपने साधर्मी बंधु के प्रति छल–कपट रहित तथा सद्‌भावनाओं सहित उनकी योग्यतानुसार आदर सत्कार करना वात्सल्य गुण कहा गया है।'

जिज्ञासा/प्रश्न – जैन समाज व्यापारी समाज है। एक समय जैन समाज की व्यापारी रहते हुए भी 'धर्माचरण के प्रति प्रतिबद्धता' जगजाहिर होने से, उनकी बड़ी साख थी। अब दिन-रात, येन-केन-प्रकारेण धन कमाने की होड़ में, जैन, जैनाचार के विपरीत खुल्लमखुल्ला आचरण करते हैं, इस कारण इतर समाजों में जैन अपनी पुरानी मौलिक पहचान खोते जा रहे हैं।

समाधान/उत्तर– निश्चित ही हमें कोई कार्य करने के पूर्व यह विचारना चाहिए कि हम क्या कर रहे हैं? क्या हमारा कार्य जैनाचार के अनुकूल है? आज कई लोग ऐसे व्यापार कर रहे हैं, जो नहीं करना चाहिए। समाज का इस ओर कोई ध्यान नहीं है। जो 'शराब' और 'अभक्ष्य' का व्यापार कर रहे हैं या व्यापार में इनका प्रयोग कर रहे हैं या सेवन कर रहे हैं, आप उन्हीं को माला पहना रहे हैं। हमसे वैदिक लोग पूछते हैं कि आपके धर्म में जिन कार्यों या बातों का निषेध है, उन्हीं कार्यों को बातों को जैन लोग खुले आम क्यों कर रहे हैं? आज न तो श्रावक में 'भीति' है, न 'श्रमण' में।

जिज्ञासा/प्रश्न– आचार्य श्री, आज आगम, शास्त्रों की 'निज भावनानुरूप', तरह-तरह से व्याख्या

कर, उन्हें विकृत रूप में प्रस्तुत किया जा रहा है, ऐसा साहित्य मुफ्त में बँट रहा, ऐसे में श्रावक क्या करें?

समाधान/उत्तर - आज कुछ लोग आगम साहित्य के मूल स्वरूप को अपनी भावना व सुविधा के अनुसार विकृत कर रहे हैं। आगम ग्रंथों को समझने के लिए यह नितांत आवश्यक है कि उसके भाष्य या टीका या व्याख्या को उस आगम ग्रंथ के मूल पाठ के साथ पढ़ें।भाष्यकार या व्याख्याकार की विकृति से बचें। ऐसे साहित्य से बचें। इसके माध्यम से स्वाध्याय ठीक नहीं होगा। दृष्टि नहीं सुधरेगी। आज हर व्यक्ति अपने-अपने भाव की अभिव्यक्ति के लिए भाष्य को माध्यम बना लेता है। ये बेईमानी है। आचार्य व विद्वानों का यह परम आवश्यक कर्तव्य है कि आगम के अनुसार प्रत्याख्यान करें, मन्तव्य के अनुसार नहीं।

जिज्ञासा/प्रश्न - आचार्यश्री, आज अनेक साधु संघों में अनुशासन शिथिल होता जा रहा है। आचार्य के रहते ही कुछ अधीनस्थ साधु आचार्य घोषित हो जाते हैं। आचार्य के रहते ही अधीनस्थ साधुओं ने अपने नाम से पत्रिकाएँ निकाल रखी हैं, संस्थाएँ बना रखी हैं, जबकि वरिष्ठतम दिगम्बराचार्य होते हुए भी आपकी कोई पत्रिका नहीं है। ऐसा क्यों ?

समाधान/उत्तर - दूसरे संघों में क्या होता है, क्या नहीं, यह उनका आंतरिक मामला है। मैं अन्य संघों की कार्य पद्धति के बारे में कोई टिप्पणी नहीं करना चाहता। समाज देखे। जहाँ तक मेरी पत्रिका का प्रश्न है, मुझे पत्रिका की कोई आवश्यकता नहीं, मैं अपने प्रवचनों में जो कुछ कहता हूँ, वही मेरी पत्रिका है, बुलेटिन है। जिन्हें मेरी पत्रिका पढ़ने की रुचि है, वे मेरे प्रवचनों में आते हैं। आजकल दो बार प्रवचन हो रहे हैं, तो दिन में दो बार पत्रिका प्रकाशित हो रही है। ऐसी पत्रिका निकालने में ही भलाई है, जिसे फाड़ा न जा सके, या जो आगे चलकर रद्दी न हो जाए। मेरे प्रवचन ही मेरी पत्रिका है।

जिज्ञासा/प्रश्न- धार्मिक व सामाजिक क्षेत्र में प्रकाशित हो रहे पत्र-पत्रिकाओं के कार्य एवं स्वरूप तथा इन क्षेत्रों की पत्रकारिता के सम्बन्ध में आप क्या संदेश देना चाहेंगे?

समाधान/उत्तर-धर्म एवं समाज के क्षेत्र में प्रकाशित पत्र-पत्रिकाओं के माध्यम से पत्रकारिता कर रहे पत्रकारों का क्षेत्र एवं कार्य, राजनीतिक क्षेत्र की पत्रकारिता से पूर्णतः भिन्न है। यहाँ समाचार से ज्यादा महत्व विचार का है। अतः यहाँ प्रामाणिकता का होना आवश्यक है अन्यथा यह महत्वहीन हो जाएगी। पत्रिकाओं को दैनिक समाचार पत्रों जैसा कार्य एवं व्यवहार नहीं करना चाहिए। बिना प्रमाणिकता के, सुनी-सुनाई बातों को काल्पनिकता के आधार पर पहले असत्य या गलत समाचार प्रकाशित करना, फिर पहले समाचार को जाँच-परख लें, जानकारी प्राप्त करें, फिर प्रकाशित करें। प्रामाणिकता तथा विश्वसनीयता आवश्यक ही नहीं, धर्म व समाज क्षेत्र की पत्रकारिता में यह अनिवार्य तत्व होना चाहिए।

स्वाध्यायः परमं तपः

- पं. लालचन्द्र जैन 'राकेश', भोपाल

सबसे पहले अर्थ समझ लें, किसको कहते हैं स्वाध्याय।
''सद्ग्रन्थों का सम्यक् अध्ययन, आत्म निरीक्षण सुष्ठुउपाय'' ॥1॥

स्वाध्याय मस्तिष्क रसायन, अतिशय पुष्टि प्रदाता है।
निज का, निज में, निज के द्वारा, साक्षात्कार कराता है॥2॥

स्वाध्याय-अध्ययन दोनों में, अन्तर बहुत कहें विद्वान्।
वह अध्ययन ही कहलायेगा, अगर प्राप्त न तत्त्वज्ञान॥3॥

नहीं जरूरी पढ़ें ग्रन्थ सौ, लेकिन एक पढ़ें सौ बार ।
खूब चबायें आत्मसात् कर, करें जुगाली बारम्बार ॥4॥

यथा दवाग्नि प्रकट न होती, काष्ठ परस्पर रगड़ बिना ।
तथा ज्ञान दीपक न जलता, पुनः-पुनः स्वाध्याय बिना॥5॥

जिनवाणी संजीवनि औषध, जन्म-जरा-मृतु का उपचार ।
सम्यक् रीत्या स्वाध्याय से, खुलता मुक्तिपुरी का द्वार॥6॥

स्वाध्याय से लाभ बहुत हैं, ज्ञान-बुद्धि विस्तृत आकाश ।
दिन-दिन बढ़ती ज्ञान-पिपासा, आत्मिक क्षमता पूर्ण विकास॥7॥

स्वाध्याय मन की खुराक है, होते हैं परिणाम विमल ।
मन में शांति, चित्त की शुद्धि, स्वाध्याय के अमृतफल॥8॥

स्वाध्याय एकान्त सखा है, अशुभ निवृत्ति खास उपाय ।
आत्मलीनता तक पहुँचाता, एकनिष्ठता कृत स्वाध्याय॥9॥

गुणवाली सूची न गुमती, कुन्दकुन्द के सुष्ठु विचार ।
तथा आत्मा का स्वाध्यायी, नहीं भटकता है संसार॥10॥

स्वाध्याय को कहा परं तप, करें तपस्वी पुनः-पुनः ।
जिसने यह आभूषण पहना, सुन्दर लगता सहस गुना ॥11॥

विचार नहीं बासी होते हैं, नित नूतनता आती है।
परिष्कार-परिमार्जन पाकर, ज्ञानकली खिल जाती है॥12॥

स्वाध्याय में करो न आलस, गुरुकुल का दीक्षांत विचार ।
स्वाध्याय तो महायज्ञ है, कृष्ण रचित गीता का सार॥13॥

स्वाध्याय-दीपक प्रकाश में, पढ़ते जो निजात्म का ग्रंथ।
वे होते अक्षय पदस्वामी, कहते गणधरादि निर्ग्रंथ॥14॥

मुनि श्री आर्जवसागराष्टकम्

(गुरु वन्दना)

पं. लालचन्द्र जैन 'राकेश'

1.

हे श्रेष्ठ श्रमण ! हे महाव्रती !
हे रत्नमयी के भागीरथ !
तुमने जगती को दर्शाया –
शिवपुर जाने का सच्चा पथ ।।
हे निर्विकार, निर्लेप संत, हे महावीर के लघुनन्दन ।
शतबार श्रीगुरु को वंदन, शतशः गुरुवर का अभिनंदन।।

2.

हे ग्राम फुटेरा के पारस,
मंडल दमोह के महारतन।
श्री शिखरचन्द – मायादेवी
की कोख हुई तुमसे पावन ।।
बचपन में ग्राम पथरिया की, माटी को आप किया चन्दन ।
शतबार श्रीगुरु को वंदन, शतशः गुरुवर का अभिनंदन।।

3.

जग उपवन के सुमन सभी,
चुन लेता यमरूपी माली ।
यह सत्य पा लिया बचपन में,
एक दिन झड़ना जीवन डाली ।।
कालबली से लड़ने को, आरूढ़ हुए संयम स्यंदन ।
शतबार श्री गुरु को वंदन, शतशः गुरुवर का अभिनन्दन।।

4.

आचार्य श्री विद्यासागर-
से जीवन में गौरव आया ।
क्रमशः संयम सोपानों चढ़,
सोनागिरि में मुनि-पद पाया ।।

श्री गुरुवर आशीष दिया, आर्जवनिधि नाम किया अंकन।
शतबार श्रीगुरु को वंदन, शतशः गुरुवर का अभिनंदन।।

5.

गुरु विद्यानिधि के चरणों में,
जिनवाणी पीयूष पिया ।
ज्ञान-ध्यान-तप के द्वारा,
जीवन को कुन्दन बना लिया ।।
सूरज-सम दक्षिण गमन किया, चढ़ा शीष गुरु-रज-चंदन।
शतबार श्रीगुरु को वंदन, शतशः गुरुवर का अभिनंदन।।

6.

तमिल, कर्नाटक, महाराष्ट्र को,
तेरह वर्षों सान्निध्य दिया।
''संस्कार जैनागम'' का दे,
वापस उत्तर आगमन किया ।।
प्रासुकाश्रु गुरुपद धोये, बारम्बार किया वंदन ।।
शतबार श्रीगुरु को वंदन, शतशः गुरुवर का अभिनंदन।।

7.

हे जिनवाणी माँ के सपूत,
हे विद्वानों के धर्म पिता।
तुमने मिथ्यात्व नशाया है,
बनकर के स्याद्वाद सविता ।।
साहित्य मंजरी मुनिवर की, सुरभित आतम मलयज चंदन ।।
शतबार श्रीगुरु को वंदन, शतशः गुरुवर का अभिनंदन।।

8.

सागर-सी गहराई सँग में,
मुश्किल हिमगिरि-सी ऊँचाई।
श्री मुनिवर में रहते हैं,
दोनों बनकर भाई-भाई।।
हे गुणसुमनों के नन्दनवन, शत-शत प्रमाण, शतशत वंदन ।
शतबार श्रीगुरु को वंदन, शतशः गुरुवर का अभिनंदन।।

पर्यावरण रक्षण का धर्म : जैन धर्म

डॉ. राजेन्द्र कुमार बंसल

ब्रह्मांड अनंत ग्रह-नक्षत्रों का समूह है, जो एक-दूसरे को प्रभावित कर जीवन देते हैं। पृथ्वी एवं सूर्य के बीच ओजोन-परत सूर्य की भीषण-उष्मा सोखकर पृथ्वी वासियों को प्रच्छत्र एवं सहनीय उष्मा प्रदान करती है। यदि प्रकृति प्रदत्त ओजोन परत न होती, तो पृथ्वी पर जीवन दूभर हो जाता। विषैली रासायनिक गैसों के प्रभाव से ओजोन परत क्षीण हो रही है, जिसके घातक परिणामों से सभी चिंतित हैं। वायु प्रदूषण के साथ ही कारखानों के घातक रसायनों से जल भी प्रदूषित हो रहा है, जिससे पेड़-पौधे, नर-पशु सभी प्रभावित हो रहे हैं। अमर्यादित वनों की कटाई एवं खान-उत्खनन से जलवायु प्रभावित हुई है। प्लुटोनियम जैसे विषाक्त रसायनों की खोज एवं संग्रह से प्रकृति एवं जीवनधारियों के सर्वनाश का खतरा उत्पन्न हो गया है। इस प्रकार प्रकृति-प्रदूषण से जन-जीवन की रक्षा-सुरक्षा हेतु पर्यावरण रक्षण जन जीवन की चर्चा का प्रमुख विषय बन गया है।

पर्यावरण - रक्षण में आत्म-विज्ञान कहे जाने वाले जैन धर्म के सिद्धान्तों की क्या भूमिका है? यह समझना विद्यमान परिप्रेक्ष्य में आवश्यक है। सर्वप्रथम पर्यावरण-रक्षण पर विचार करना अपेक्षित है।

पर्यावरण – रक्षण :

पर्यावरण-रक्षण में एकेन्द्रिय जीवधारी पंचभूत तत्वों की मूल अवस्था उनके कृत्रिम परिवर्तन तथा संरक्षण का अध्ययन किया जाता है, ताकि प्रदूषण के दुष्प्रभावों से सम्पूर्ण जीवों की रक्षा की जा सके।

(1) पर्यावरण का स्वरूप :

विश्व की रचना जीव-अजीव इन दो तत्वों से मिलकर हुई है। अजीव वर्ग में पुद्गल अर्थात जड़-वस्तुएँ, धर्म, अधर्म, आकाश एवं काल समग्र सम्मिलित हैं। जीव-तत्व में एकेन्द्रिय वनस्पति से लेकर पंचेन्द्रिय तक सभी जीवधारी आते हैं। जीवन दो तत्वों से मिलकर बना है। पहला आत्मा और दूसरा शरीर। शरीर पुद्गल की अवस्था है। इससे सभी परिचित हैं। पृथ्वी, जल, वायु, अग्नि एवं वनस्पति, ये पंचभूत तत्त्व एकेन्द्रिय जीवधारियों की श्रेणी में आते हैं। वस्तुतः प्रकृति एवं पर्यावरण का निर्माण इन पंचभूत तत्त्वों के सम्मिलिन एवं समायोजन से हुआ है। ये पंचभूत तत्त्व जीवधारियों के भोजन के आधार के साथ ही विश्व में जीवन-जीने की अवस्था का निर्माण करते हैं। बरसात-गर्मी-सर्दी, हवा का प्रवाह आदि जल-वायु का निर्धारण भी इन पंचभूत तत्वों की क्रिया-प्रतिक्रिया से स्वतः होता है। पंचभूत तत्त्वों के साथ ही पृथ्वी के जलवायु को प्रभावित करने वाली ग्रह-नक्षत्रों की स्थिति तथा उनमें परिवर्तन से पर्यावरण प्रभावित होता है।

(2) प्रकृति अहस्तक्षेप का सिद्धान्त :

जब तक पंचभूत तत्व निर्विघ्न रूप से अपना काम करते हैं, तब तक प्राकृतिक संतुलन बना रहता हौ और पर्यावरण-रक्षण जैसी समस्या उत्पन्न नहीं होती। इसके संतुलन के अनुसार पृथ्वी के अन्य जीवधारी

अर्थात् पेड़-पौधे, कीड़े-मकोड़े, पशु-पक्षी एवं मनुष्य सभी का जीवन सहज सरल बना रहता है। जैसे ही इनकी अवस्था में व्यापक परिवर्तन होता है प्रकृति का संतुलन भंग हो जाता है, जिसका सीधा प्रभाव पर्यावरण पर तो पड़ता ही है, जीवधारियों का जीवन भी खतरे में पड़ने लगता है। इसलिए पर्यावरण-रक्षण का प्रमुख सिद्धान्त है कि पंचभूत तत्वों या प्रकृति को बिना छेड़े अर्थात बिना हस्तक्षेप किये जैसी है वैसी ही रहने दो। इसे प्रकृति का अहस्तक्षेप का सिद्धान्त कह सकते हैं। इसका अर्थ है कि प्रकृति को स्वचालित व्यवस्था में कृत्रिम रूप से परिवर्तन न किया जाये।

(3) औद्योगिक प्रगति का आधार-प्रकृति हस्तक्षेप :

हमारी आधुनिक प्रगति का आधार प्रकृति में हस्तक्षेप है इसे यूँ भी कहा जा सकता है कि औद्योगिक प्रगति प्रकृति की प्रकृत अवस्था में परिवर्तन से जुड़ी है। यह परितर्वन जल-वायु, ध्वनि-प्रदूषण, कृत्रिम झील निर्माण, वन-ह्रास एवं भू-उत्खनन आदि भौतिक परिवर्तनों के रूप में हमारे सामने हैं। भौतिक प्रदूषण के दो दुष्परिणाम हमारे सामने आते हैं, पहला मौसम में असामयिक परिवर्तन जैसे असमय जलवृष्टि, अतिवृष्टि, अनावृष्टि, अति-उष्णता, अति शीतलता, भूचाल-भूकम्प एवं आकस्मिक मौसम परिवर्तन आदि । दूसरा प्रदूषण से जीवधारियों के जीवन पर घातक प्रभाव होता है और उनका जीवन खतरे में पड़ता है, रोग-निरोध शक्ति कम होती है और अनेक प्रकार की बीमारियों का उदय होता है। तापमान आर्द्रता कम अधिक होकर जलवायु बदलता है, जो अनेक आपदाओं को जन्म देता है। इस प्रकार हम देखते हैं कि विकास के लिए प्रकृति में कुछ सीमित दायरे में परिवर्तन किया जाना अपरिहार्य माना जा सकता है, किन्तु अमर्यादित असीमित प्रकृति-हस्तक्षेप के परिणाम घातक होते हैं। यही कारण है कि वर्तमान में जनसंख्या परिसीमन के साथ ही पर्यावरण-रक्षण के लिये विशेष प्रयास किये जा रहे हैं।

(4) प्रदूषण - भौतिक और अभौतिक :

पर्यावरण एक भौतिक घटक है। जब पर्यावरण ह्रास या रक्षण की चर्चा होती है तब भौतिक प्रदूषण के साथ ही मानसिक प्रदूषण पर विचार करना आवश्यक हो जाता है, क्योंकि राग-द्वेष, काम-क्रोध, ईर्ष्या-अहंकार, करुणा-क्रूरता, समत्व-असंयम, सरलता-मायाचार, अलोभ-लोभ आदि के मनोभावों की तीव्रता-मंदता की डिग्री के अनुसार ही व्यक्ति-समाज प्रकृति में हस्तक्षेप करता है। जब व्यक्ति लोभान्ध होता है, तब वह अमर्यादित वन-विनाश, अनियन्त्रित-उत्खनन एवं असीमित जलवायु प्रदूषण करता है, जबकि अपेक्षाकृत कम लोभी व्यक्ति/संस्था संयमित मर्यादित प्रदूषण करती है। इस दृष्टि से भौतिक-प्रदूषण की अवस्था मानसिक-प्रदूषण की तीव्रता-मंदता पर निर्भर करती है। अतः भौतिक प्रदूषण रोकने या नियंत्रित करने हेतु मानसिक प्रदूषण नियंत्रित करना आवश्यक है। मानसिक प्रदूषण की रोकथाम धर्म, सदाचार एवं मनोविज्ञान का विषय है।

धर्म का स्वरूप - ज्ञान-स्वभाव की प्राप्तिः

जैन-धर्म के सिद्धान्त समझने के पूर्व 'धर्म' शब्द का अर्थ समझना आवश्यक है। धर्म का सही अर्थ न समझने के कारण मानव जगत का बड़ा अहित हुआ है, हो रहा है। जो धर्म के कोसों दूर है, उसे धर्म मानकर बहुत खून-खराबा हुआ/हो रहा है। किसी महापुरुष या आदर्श की पूजा भक्ति करने पर उसका

आदर्श जनजीवन से लुप्त हो जाता है और हम धर्म का दिखावा मात्र करते रह जाते हैं। यही कारण है कि विद्यमान धर्मक्रियाएँ जीवन रूपांतरण में सहायक सिद्ध नहीं हुई।

''वत्थु सहावो धम्मो'' के अनुसार वस्तु के स्वभाव को धर्म कहते हैं। विश्व में जितने भी पदार्थ हैं, उन सबके अपने-अपने गुण धर्म हैं। वे अपने गुण धर्म रूप कार्य करें, अन्यथा न हों, यही उनका धर्म है। अजीव द्रव्य रूप-रस-गंध युक्त अचेतन होते हैं। जीव अरूपी, रस-गंध-विहीन-ज्ञान दर्शन स्वभावी होते हैं। जिस प्रकार एकेन्द्रियधारी पंचभूत तत्वों में पृथ्वी सहनशील उपजावक है, जल निर्मल-प्रवाहक है, अग्नि दाहक-पाचक-प्रकाशक है, वायु शीतल प्रवाहक है, वनस्पति जीवन-रक्षक परोपकारक है, उसी प्रकार सभी जीव स्वभाव से साक्षीज्ञायक हैं, किन्तु जीवात्माओं ने अनादि से अपना ज्ञायक-धर्म छोड़कर राग-द्वेष-मोह रूप विभाव-भावों को अपना माना है, अतः वे अशांत एवं दुःखी हैं। वे भ्रम से वस्तुओं के भोग-उपभोग एवं मनोविकारों/ आत्मविकारों को अपना मानकर उनसे सुख पाने का प्रयास कर रहे हैं। पर वस्तुओं के संयोग-वियोग से आकुलता होती है, जो दुख-स्वरूप है। सुख या आनंद की अनुभूति तभी होती है, जब आत्मा मोह-राग-द्वेष छोड़कर निर्विकल्प रूप से अपने साक्षी ज्ञायक स्वभाव में ''होने-रूप'' रहे। ज्ञायक स्वभाव में स्थित-स्थिर होने से परम आनंद की प्राप्ति होती है। इस प्रकार मोह-राग-द्वेष रहित अपने शुद्ध ज्ञान स्वरूप की प्राप्ति ही धर्म है। और उसकी प्राप्ति का पुरुषार्थ धर्म मार्ग है। यह मार्ग आत्म-श्रद्धान, आत्म-ज्ञान और आत्म स्वरूप-रमण की एकता रूप है।

(1) स्वचालित विश्व व्यवस्था :

विश्व जीव अजीव द्रव्यों का समूह है। विश्व के सभी द्रव्य स्वतंत्र स्वाधीन एवं अपने आप में परिपूर्ण हैं। कोई किसी का कुछ बना-बिगाड़ नहीं सकता। कोई व्यक्ति या शक्ति इस विश्व का निर्माता, नियंता या कर्ता नहीं है। सभी जीव अपने-अपने भावों के अनुसार चौरासी लाख योनियों में भ्रमण कर रहे हैं। विश्व में जितने भी परिवर्तित हो रहे हैं, वे सभी द्रव्यों की अपनी-अपनी योग्यता के अनुसार हो रहे हैं। द्रव्यों की अवस्था में नित-नवीन परिवर्तन होता है, उनके गुणों का स्वभाव है। द्रव्य सत् स्वरूप है। जो सत् है वह त्रिगुणात्मक होता है। उसमें उत्पत्ति विनाश और ध्रौव्यत्व पाया जाता है। परिवर्तन की तीन अवस्थाएँ होती हैं यथा, (1) गुण की पूर्व अवस्था (2) परिवर्तित अवस्था एवं (3) गुणों की स्थायित्व। प्रतीक रूप में द्रव्यों के इन गुणों का कार्य ब्रह्मा, विष्णु और महेश करते हैं। ब्रह्मा उत्पत्ति, विष्णु गुणों का स्थायित्व एवं महेश परिवर्तन/विनाश के प्रतीक हैं। अंग्रेजी में गॉड शब्द 'जी ओ डी' शब्दों से मिलकर बना है। इसमें 'जी' जेनरेटर, 'ओ' ऑपरेटर और 'डी' डिस्ट्रक्टर का प्रतीक है। विज्ञान की भाषा में द्रव्य की इन तीन शक्ति को न्यूट्रान, इलेक्ट्रान एवं प्रोट्रान की ट्रिनिटी के रूप में समझ सकते हैं। इस प्रकार विश्व व्यवस्था द्रव्यों के सत् स्वभाव का स्वचालित रूप है। इसका फलित अर्थ यह है कि कोई द्रव्य किसी दूसरे द्रव्य के अधीन नहीं है। एक द्रव्य का एक गुण उसके दूसरे गुण के अधीन नहीं है और एक गुण की अवस्था उसकी दूसरी अवस्था के अधीन नहीं है। वह सभी द्रव्यों की स्वतंत्रता का उद्घोष है, जिसके अनुसार कोई एक द्रव्य किसी दूसरे द्रव्य का भला-बुरा या सुखी-दुखी नहीं कर सकता। विश्व की स्वचालित व्यवस्था की प्रकृति से पर-वस्तुओं में परिवर्तन करने के विकल्पों एवं राग द्वेष से मुक्ति मिलती है। साथ ही कर्ता-भोक्ता एवं स्वामित्व

भाव के अभाव में आत्म-साधक अपने शुद्ध-स्वरूप को अपने आप प्राप्त करने का सम्यक् पुरुषार्थ करता है।

(2) जीवों के कर्मानुसार फल :

जीवों को अपने-अपने कर्म के अनुसार सुख-दुख रूप फल मिलता है। कर्म शब्द का उपयोग दो अर्थों में हुआ है। प्रत्येक जीव के फल-प्रतिपल जो शुभ-अशुभ भाव/आत्मविकार होते हैं वह उसका कर्म है। जैसा भाव वैसा कर्म। और जैसा कर्म, वैसा फल। इस दृष्टि से कर्म जीवात्माओं का अपना-अपना शुभाशुभ भाव है, जिसके वे कर्त्ता और भोक्ता हैं। दूसरी दृष्टि से कर्म पुद्‌गल परमाणु हैं, जो जीव के शुभाशुभ भावों का संयोग पाकर आत्म-प्रदेशों के चारों ओर आवृत्त हो जाते हैं और अपनी बंधन-अवधि के पश्चात् सुख-दुःख का फल देकर झड़ जाते हैं। ये कर्म पुद्‌गल की कार्मण वर्गणाएँ कहलाती हैं। कर्म-बंध का मूल जीव का मोह-राग-द्वेष भाव है, जिससे नवीन कर्म-बंध होता है। जब जीव अपने दर्शन ज्ञान स्वभाव में स्थित रहता है, तब कर्म-आगमन एवं बंध की प्रक्रिया रुक जाती है और जीवन का रूपांतरण धर्म अर्थात स्वभाव-भाव की ओर होने लगता है, जिसका फल आत्मा से परमात्मा होना होता है। जैन दर्शन के अनुसार जीवों को अपने अपने शुभ-अशुभ भावों के अनुसार गति, जाति, इन्द्रियाँ, आयु, शरीर, गौत्र आदि तथा सुख-दुःख की सामग्री मिलती है। मनुष्य, देव, तिर्यंच एवं नरक यह चार गतियाँ और चौरासी लाख योनियाँ होती हैं। अज्ञानी जीव अनादि काल से इन गतियों/योनियों में भ्रमण कर रहा है। इन्द्रियाँ पाँच होती हैं-स्पर्शन, रसना, घ्राण, चक्षु और श्रोत्र। मनुष्य, देव एवं नारकी पंचेन्द्रिय जीव होते हैं। तिर्यंच गति में एकेन्द्रिय से लेकर पंचेन्द्रिय जीव होते हैं। एकेन्द्रिय जीवों में पृथ्वी, जल, वायु, अग्नि और वनस्पतिकाय के जीव सम्मिलित हैं, जो पंचभूत तत्व कहलाते हैं। जैन धर्म की इस अनादि मान्यता की पुष्टि डॉ. जगदीशचंद बसु ने बीसवीं सदी में वैज्ञानिक प्रयोगों द्वारा की। लट-केंचुए दो इन्द्रिय जीव हैं। कीड़े-मकोड़े तीन इन्द्रिय जीव हैं। बर्र-ततैया-मक्खी चार इन्द्रिय जीव हैं तथा पशु-पक्षी-मनुष्य पाँच इन्द्रिय धारी जीव हैं। सभी जीवों को सिद्धान्त के आधार पर सभी को जीवन जीने के समान अवसर दिये हैं। किसी जीव का प्राण-हरण करना एक बर्बर प्रवृत्ति है। यही कारण है कि प्रकृत अवस्था में सभी जीव एक दूसरे का परस्पर उपकार करते हैं। जैन दर्शन का अहिंसा-सिद्धांत जीव-रक्षा एवं परोपकार का आदर्श प्रस्तुत कर भावानुसार सभी जीवों को परमात्मा होने का आह्वान करता है।

(3) शुभाशुभ भाव और शुद्ध भाव का प्रभाव :

मन में निरंतर पर-वस्तुओं के निमित्त से शुभ-अशुभ भाव उठते रहते हैं। दान, दया, करुणा, परोपकार एवं सद्‌वृत्ति के भाव शुभ भाव कहलाते हैं इन्हें शुभ राग भी कहा जाता है। क्रोध, मोह, लोभ, ममकार, अहंकार, मायाचार, ईर्ष्या-द्वेष, पर-पीड़न, तनाव, हिंसा आदि असद्-वृत्ति के भाव अशुभ भाव कहलाते हैं, जो द्वेष एवं तीव्र राग मूलक होते हैं। अशुभ भावों से पाप-बंध और शुभ भावों से पुण्य-बंध होता है। अशुभ भावों से प्रकृति प्रदूषित होती है। शुभ भावों से प्रकृति की सुन्दरता एवं उसके उपहारों में वृद्धि होती है। अशुभ भावों का फल नरक-दुःख है। शुभ भावों का फल स्वर्ग-सुख है। ये दोनों भाव धर्म रूप नहीं होते। आत्मा का शुद्ध ज्ञान स्वभाव भाव धर्म कहलाता है। शुद्ध भाव होने की प्रक्रिया में शुभ भाव अस्थायी पड़ाव के रूप में आते हैं। जो साधक शुभ भावों के पड़ावों पर अटक जाता है, वह धर्म-मार्ग से भटक जाता है। शुद्ध

भावों से प्रकृति/पर्यावरण निर्मल विशुद्ध होकर प्रकृति की सुन्दरता में वृद्धि होती है। सभी प्राणी निर्भय एवं सुरक्षित महसूस करते हैं। शुद्ध भाव प्राप्त करने वाला दिव्य जीव सिद्धालय में जाकर अपने अक्षय-आनंद ज्ञान स्वरूप का अनुभव करता हुआ आनंद में निमग्न रहता है।

(4) मुक्ति का मार्ग शुद्ध भाव की प्राप्ति :

आत्म स्वरूप के प्रति बेहोशी संसार दुःख का मूल है। इस बेहोशी में जब पूर्व-बद्ध कर्म अपना सुख-दुःख रूप फल देकर झड़ते हैं, तब जीव मोह-राग-द्वेष के कारण फर्म-फल में अनुरक्त/तन्मय हो जाता है और पर-वस्तुओं से अपना नाता जोड़ लेता है। इस कारण नवीन कर्म बंध होता है। इस बेहोशी में कर्म-आगमन एवं कर्म बंध की प्रक्रिया निरन्तर चलती रहती है। जब आत्म-साधक कर्म-कर्मफल एवं मनोविकारों से भिन्न अपने साक्षी-ज्ञायक स्वरूप को जान/समझकर ज्ञायक-स्वभाव के प्रति जागरूक रहता है, उस काल में नवीन कर्म बंध नहीं होता। इसे संवर कहते हैं। जब आत्म-साधक निरंतर ज्ञायक-स्वरूप के प्रति जागरूक रहकर उसमें सहज स्थिर-तन्मय होता है, तब पूर्व-बद्ध कर्म बिना शुभाशुभ फल दिये झड़ने लगते हैं, इसे कर्म-निर्जरा कहते हैं। यही अविपाक निर्जरा है जो मोक्ष का कारण है। इस प्रक्रिया में जब सम्पूर्ण कर्मों का क्षय हो जाता है, तब आत्म-साधक अपने शुद्ध-ज्ञान-दर्शन-स्वभाव को प्रकट कर सर्वज्ञ-सर्वदर्शी बन जाता है, जो अनंत अक्षय-आनंद का स्रोत है। इसे परमात्म/सिद्ध अवस्था कहते हैं। इस प्रकार आत्मा के शुद्ध-ज्ञायक-स्वरूप की प्रतीति, ज्ञायक-स्वरूप का ज्ञान और ज्ञायक स्वरूप में निमग्नता से नवीन कर्म-बंध रुकता है, पूर्व-बद्ध कर्म बंध टूटते हैं और आत्मा अपने शुद्ध स्वभाव रूप होने जैसा हो जाता है। इसे सम्यगदर्शन-ज्ञान-चारित्र की एकता का 'त्रिरत्न' रूप मोक्ष मार्ग/धर्म मार्ग कहा जाता है। संक्षेप में यह आत्म के प्रकृत/स्वभाव-प्राप्ति का आत्म-विज्ञान भी कहा जाता है।

(5) शुद्धि का आधार अहिंसा :

अहिंसा एवं अपरिग्रह दर्शन से जैन धर्म का दार्शनिक, आध्यात्मिक एवं आचरण पक्ष संचालित होता है। इसमें विचार उन्मुक्तता हेतु अनेकांत-दर्शन सहयोगी का काम करता है। जगत के दार्शनिक जीवों के प्राण-हरण को हिंसा मानते हैं। जैन दर्शन की मान्यता है कि कोई किसी के जीवन को न तो दे सकता है और न प्राण हरण ही कर सकता है। सभी जीव अपनी आयु के अनुसार उत्पन्न होते और मरते हैं। फिर हिंसा-अहिंसा का क्या अर्थ है ? आत्मा साक्षी-ज्ञान स्वभावी है। संसारी अज्ञान-अवस्था में आत्मा में निरंतर आत्म-विकार/क्रोधादि मनोविकार उत्पन्न होते रहते हैं। इससे उसका ज्ञायक शांति स्वरूप बाधित होता है। इससे आत्म-स्वभाव की हिंसा होती है। जैन दर्शन की दृष्टि से आत्म-स्वभाव की हिंसा ही वास्तविक हिंसा है, जो भाव हिंसा कहलाती है। आत्मविकार/मनोविकार रूप भाव हिंसा से ही मानसिक प्रदूषण फैलता है, जिससे सभी त्रस्त हैं। परस्पर ईर्ष्या-द्वेष, स्वार्थ, अदया के कारण यह प्रदूषण और अधिक खतरनाक हो गया है।

जब जीव क्रोध-अहंकार, लोभ, कपट-मायाचार आदि मनोविकारों से पीड़ित होता है, तब बाह्य में उसकी प्रवृत्ति हिंसात्मक होना स्वाभाविक है। इस स्थिति में उसके मन-वचन-काय की क्रिया-प्रतिक्रया से

एकेन्द्रिय जीव तथा अन्य जीवों का घात होता है, जो द्रव्य-हिंसा कहलाती हैं। चूँकि विश्व के प्रत्येक स्थान पर अनंत जीवराशी भरी है, अतः आत्म-साधक अपने ज्ञायक-स्वरूप जैसा सभी को ज्ञायक मानता हुआ मन-वचन-काय से यत्नाचारपूर्वक व्यवहार करता है और सभी जीवों के प्रति परस्पर उपकार-भाव रखता है। इस प्रकार आत्म साधक सदैव अपने आत्मस्वरूप एवं पर-जीवन-रक्षा के प्रति सजग रहता है। यह मानसिक सजगता उसे मानसिक प्रदूषण से रोकती है।

'परस्परोपग्रहो जीवानाम्' सूत्र के अनुसार पंचभूत तत्व बिना किसी प्रयोजन के जगत के जीवों को भोजन प्रदान करते हैं, जिसके अभाव में जीवों का जीवन दुष्कर है। इसी कारण 'जीवः जीवस्य भक्षणम्' जैसा सूत्र भी कथन में आता है। प्रश्न यह है कि जब एक जीव का कलेवर दूसरे जीव का आहार होता है, तब जीव में अहिंसा का पालन कैसे संभव है? इसका समाधान यह है कि सर्वप्रथम आत्मसाधक अपने क्रोधादि मनोभावों को अपना स्वभाव-भाव न मानकर उनसे अपनापन नहीं जोड़ता, वह तो मात्र उनका साक्षी ज्ञायक होता है। अतः मनोभाव आते हैं और चले जाते हैं, किन्तु उनका अच्छा-बुरा संस्कार आत्मा पर नहीं पड़ता। दूसरे, आत्म साधक अपनी जीवन-चर्या अर्थात् चलना, फिरना, खड़े रहना, बैठना, सोना, भोजन करना आदि क्रिया जागरूकतापूर्वक करता है, जिससे अन्य जीवों की हिंसा नहीं होती और अशक्तता में अनिच्छित मात्र एकेन्द्रिय जीवों तक ही सीमित रहती है। इसी भावना से आत्म-साधक व्यक्ति अन्नाहारी/शाकाहारी होता है। वह दूसरे जीवों की रक्षा एवं उपकार के साथ ही प्रकृति की व्यवस्था में हस्तक्षेप करने से दूर रहता है। अनावश्यक भूमि खोदना, हवा-प्रदूषित करना और बिलोना, पानी प्रदूषित करना और व्यर्थ बहाना, अनावश्यक पेड़-पौधों को काटना-तोड़ना, अग्नि जलाना एवं प्राकृतिक साधनों को विकृत करने से वह दूर रहता है। इतना ही नहीं, आत्म-साधक सहृदय-निर्मल स्वभाव का होने के कारण सत्य के अन्वेषण हेतु सदैव प्रयत्नशील रहता है और पूर्वाग्रह से मुक्त होता है। विचारों की उन्मुक्तता अनेकान्त दर्शन का आधार है। इसका अर्थ है कि दिमाग की खिड़की सत्य जानने हेतु सदैव खुली रखना। इस प्रकार समग्र रूप से जीवन में अहिंसा के प्रयोग से आत्म साधक अपने ज्ञायक स्वभाव में रहने के प्रयास के साथ ही प्रकृति एवं पंचभूत तत्वों की रक्षा करता है और अन्य जीवों की हिंसा से विरत दूर रहता है, क्योंकि अपने सत् स्वरूप को स्वीकारने वाला साधक आस्तिक्य बोध के कारण सहज ही विश्व के अन्य जीवों के प्रति करुणावंत हो जाता है। इस प्रकार अहिंसा का सिद्धान्त आत्म शुद्धि के साथ ही पर्यावरण-रक्षण का सहज प्रायोगिक रूप भी है।

(6) अंतर-वाह्य भावों का बिम्ब - अपरिग्रह

जीवात्माओं को आनंद/शिव स्वरूप होने में सबसे बड़ा बाधक तत्व है परिग्रह। परिग्रह अर्थात मूर्च्छा/बेहोशी। जिस प्रकार जीव बेहोशी में अनर्गल बकवास करता है, उसी प्रकार जीवात्माओं ने अनंत काल से आत्म-स्वरूप की बेहोशी में पर-पदार्थ एवं इन्द्रिय-भोगों से प्रगाढ़ सम्बंध जोड़ लिया है। वह आत्मविकार/शुभाशुभ रूप मनोविकारों आदि को मानता हुआ उनका संवर्द्धन करता है। उसने अपने साक्षी ज्ञायक स्वभाव को विस्मृत कर दिया है, जिसका परिणाम है अनंत-दुख, अनंत-भटकन और बेचैनी। आत्म

स्वभाव को भूला व्यक्ति अज्ञान में पर-वस्तुओं से अनंत नाता जोड़ रहा है और उनका संग्रह कर रहा है, परन्तु आज तक उसकी इच्छा तृप्त नहीं हुई।

आत्मसाधक ज्ञानी अपने ज्ञायक स्वभाव के प्रति सदैव सजग रहता है और पर-वस्तुओं के संग्रह की तृष्णा से दूर रहता है। वह आवश्यकता से अधिक धन संग्रह नहीं करता और प्रकृति की व्यवस्था में अनावश्यक हस्तक्षेप नहीं करता। अपरिग्रह की अवधारणा जब जीवन में उतरती है तब आत्म-साधक स्वतः अहिंसा, सत्य, अस्तेय एवं ब्रह्मचर्य की ओर क्रमशः बढ़ने लगता है। अपरिग्रह का महत्त्व समझे बिना जीवन में धर्म-यात्रा संभव नहीं है।

पर-वस्तुओं एवं पर-भावों का ग्रहण परिग्रह-भाव की विद्यमानता में ही संभव है। परिग्रह साथ हो और परिग्रह-भाव न हो, ऐसा होना संभव नहीं है। अहिंसा पालन की स्थिति में यह विरोधाभास कदाचित् संभव है। वहाँ जागरूकता सहित जीव हिंसा होने पर साधक को हिंसा का दोष नहीं लगता। किन्तु सुई मात्र के परिग्रह होने पर भी साधक परिग्रह-पाप के दोष से मुक्त नहीं हो पाता। आत्म-साधक का बाह्य आचरण और प्रवृत्ति उसकी आंतरिक मान्यता एवं भावों का प्रतिबिम्ब होता है। इस दृष्टि से आत्मसाधक अंतर-वाह्य एक जैसा सहज सरल निर्मल होता है, कहीं भी दुराव-छिपाव, ग्रन्थि या आग्रह नहीं होता। ऐसी निर्मल, परिणति वाला जीव परमानंदरूप वीतरागता को प्राप्त कर पाता है।

प्रकृति/पर्यावरण-रक्षण का धर्म-जैन-धर्म

उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट है कि जैन दर्शन की प्रकृति में अ-हस्तक्षेप की अवधारणा अहिंसा और अपरिग्रह के सिद्धांतों से प्रकृति/पर्यावरण रक्षण का कार्य स्वतः होता है। वस्तुतः जैन दर्शन आत्मा का उसके प्रकृत रूप अर्थात् स्वाभाविक स्वरूप में होने का आत्मविज्ञान है। आत्मा को आत्म स्वरूप में हाने की प्रक्रिया में पर्यावरण ह्रास का मुख्य स्त्रोत मानसिक प्रदूषण एवं परिग्रह के भावों से मुक्ति मिलती ही है। साथ ही अहिंसा के परिपालन से ज्ञायक स्वरूप की प्राप्ति के साथ पंचभूत तत्वों एवं अन्य जीवों की रक्षा भी सहज हो जाती है। इस प्रकार जैन धर्म वास्तव में प्रकृति/पर्यावरण की रक्षा का धर्म है जिसे एक दूसरे से पृथक नहीं किया जा सकता। जो व्यक्ति जैन धर्म के सिद्धांतों को मानता है वह पर्यावरण रक्षक नियम से होगा ही। आवश्यकता है कि हम भावानात्मक स्तर पर विश्वस्तर पर विश्व की सभी जीवात्माओं को अपने जैसा ज्ञान स्वभावी समझे/माने और प्रकृति की स्वचालित व्यवस्था में हस्तक्षेप न कर सभी की रक्षा का यथाशक्य प्रयास करे। ऐसा होने पर प्रदूषण या पर्यावरण रक्षण जैसी कोई समस्या विद्यमान नहीं रह जायेगी। मानसिक एवं भौतिक प्रदूषण से मुक्ति पाकर हम अपने प्रकृत ज्ञान स्वभाव को पावें और सभी को अन्याय, अनाचार, अनीति और शोषण से मुक्त रखकर सहज, सरल, जीवन का अवसर दें, यही कामना है। प्रकृति पर्यावरण प्रकृत पर्यावरण प्रकृत रूप में हो, आत्मा शुद्ध साक्षी ज्ञायक हो और सभी जीव परस्पर सबका उपकार करें, यही जिनेश्वरों का उद्घोष है, जो धर्म मार्ग की सर्वोत्कृष्ट उपलब्धि है।

जैन दर्शन में वैज्ञानिक विचार धारा

डॉ. नारायण लाल कछारा

दर्शन और विज्ञान ज्ञान की दो धाराएँ हैं, दोनों का उद्‌गम जिज्ञासा से होता है। जीव और जगत के बारे में प्रश्न हमारी विचारधारा को उत्प्रेरित करते हैं गतिशील बनाते हैं और दिशा प्रदान करते हैं। हमारे विचारों के विस्तार और सोच के नये आयाम की स्थापना को प्रगति कहा जा सकता है। परंपरा से जीवन और जगत के समस्त आयाम संबंधित चिंतन को दर्शन और पदार्थ जगत के चिंतन को विज्ञान कहा गया है। स्पष्टतः दोनों विचारधाराओं में समानता देखी जा सकती है। परन्तु कालक्रम से चिंतन की जो प्रणालियाँ दोनों विचार धाराओं में विकसित हुई हैं, वे उन्हें पृथकता का स्वरूप अवश्य प्रदान करती हैं। दर्शन मुख्यतः तर्क और विश्लेषण प्रधान है, विज्ञान प्रयोग और गणित आधारित है और विश्लेषण का उपयोग करता है।

ज्ञान आत्मा का गुण है। कर्मों के आवरण से आत्मा का अनंत ज्ञान प्रक्षिप्त अवस्था में रहता है, उसका उपयोग नहीं हेता। जैसे-जैसे आवरण कम होता है ज्ञान की शक्ति का उपयोग बढ़ता है और मनुष्य का चिंतन विकसित होता जाता है, उसमें प्रतिभा और सामर्थ्य का विकास होता है। यह प्रतिभा और सामर्थ्य ही मानव प्रगति का कारण बनती है।

आत्मा की मान्यता भारतीय दर्शन की विशेषता है, सभी दर्शन (चार्वाक को छोड़कर) किसी न किसी रूप में आत्मा की अवस्थिति स्वीकार करते हैं। चेतना आत्मा का मुख्य गुण है और यही जीव और अजीव के बीच भेद करता है। आत्मा अमूर्त और अजर, अमर है और कर्मों के अनुसार शरीर धारण करती है। कर्मों के क्षय से ही आत्मा जीवन-मृत्यु के चक्र से मुक्त होकर परम् पद को प्राप्त कर सकती है।

दर्शन और विज्ञान दोनों सत्य के उपासक हैं। दर्शन का अन्तिम लक्ष्य परम सत्य की प्राप्ति है जो आत्म अनुभूति से ही संभव है। आत्म साक्षात्कार से अपने अस्तित्व का ज्ञान होता है। अनंत सुख शांति की अनुभूति होती है, सारी जिज्ञासाएँ समाप्त हो जाती हैं और कुछ अधिक जानने की आकांक्षा ही नहीं रहती। आत्म ज्ञान ही परम सत्य का परिचायक है।

पदार्थ जगत का क्षेत्र भी अनंत है, अनंत पर्यायें हैं। आधुनिक विज्ञान द्वारा नित नये पर्याय की खोज हो रही है, नये-नये साधन विकसित किए जा रहे हैं। इस विकास क्रम का कोई अंत नहीं है। मानव मस्तिष्क की यह प्रक्रिया बहुत महत्वपूर्ण और श्रेयस्कारी है परन्तु पदार्थ जगत तक सीमित होने से परम सत्य की प्राप्ति नहीं करा सकती। पदार्थ के साथ चेतना का चिंतन ही विज्ञान को जीवन के लिए परम उपयोगी बना सकता है।

जैन दर्शन की कई विशेषताएँ हैं, उनमें से दो हैं आत्मा की व्यक्तिगत स्वतंत्रता और लोक की अकृत्रिमता। हर प्राणी की आत्मा स्वतंत्र है वह किसी ईश्वर या ब्रह्म का अंश नहीं है, वह अपने ही कर्म और

पुरुषार्थ के अनुसार व्यवहार करता है। यह एक पूर्ण वैज्ञानिक चिंतन है। यह लोक अकृत्रिम है और षड्द्रव्यों से निर्मित है। ये द्रव्य हैं-जीव, पुद्गल, धर्म, अधर्म, आकाश और काल। प्रत्येक द्रव्य का स्वतंत्र अस्तित्व है और वह स्व गुण-धर्म के अनुसार व्यवहार करता है। हर द्रव्य अनंत शक्ति सम्पन्न है और अन्य द्रव्यों के व्यापार में भी सहकारी है। इस सहकार से ही लोक का संचालन हो रहा है। यह व्यवस्था अपने आप में परिपूर्ण है इसके संचालन में किसी अन्य शक्ति (ईश्वर या ब्रह्म) की आवश्यकता नहीं है।

विज्ञान, मति और श्रुतज्ञान आधारित है अर्थात् इसका आधार मन व इंद्रियाँ हैं। इन भौतिक माध्यमों से प्राप्त ज्ञान सापेक्ष है, अतः वह आंशिक सत्य को ही प्रकट करता है। आत्मज्ञान अमूर्त आत्मा से बिना भौतिक माध्यम से उत्पन्न होने के कारण निरपेक्ष है और पूर्ण सत्य को प्रकट करता है, इसमें संकल्प-विकल्प का कोई स्थान नहीं होता। विज्ञान सापेक्ष होने के कारण परिवर्तनशील है, आज का सत्य कल असत्य भी हो सकता है। आत्म ज्ञान में कोई परिवर्तन नहीं होता।

विज्ञान और जीव विज्ञान दोनों में नियमों और सिद्धान्तों की व्यवस्था है। विज्ञान के नियम पदार्थ के व्यवहार विशेष की व्याख्या करते हैं परन्तु सापेक्ष होने के कारण उनमें संशोधन की संभावना बनी रहती है। जीव के लिए सबसे महत्वपूर्ण कर्म सिद्धान्त है जो शाश्वत है और लोक में सभी प्राणियों के लिए समान रूप से कार्य करता है। विज्ञान के नियम प्रयोगशाला में सिद्ध किए जा सकते हैं परन्तु कर्म सिद्धान्त को सिद्ध करने के लिए कोई आसान तरीका नहीं है। परन्तु इसकी प्रामाणिकता तर्क और जीव व्यवहार से समझी जा सकती है। पदार्थ में अपना कोई ज्ञान नहीं होता और इसलिए उसका व्यवहार समान अवस्थाओं में एक समान होता है। पदार्थ पर प्रयोग की पुनरावृत्ति प्रयोगशाला में संभव है। जीव में ज्ञान होने से विवेक बुद्धि उपलब्ध होती है जिसके आधार पर वह संकल्प-विकल्प रूप में निर्णय कर सकता है। इसलिए यह निश्चित नहीं है कि जीव समान परिस्थिति में एक सा व्यवहार करेगा, उसका व्यवहार भिन्न भी हो सकता है। यही संकल्प-विकल्प की शक्ति जीव को पुद्गल से भिन्न और उच्च श्रेणी में खड़ा करती है।

विज्ञान में गणित एक प्रमुख विधा है। गणित पदार्थ के विभिन्न गुणों के संबंध की सार्थक व्याख्या करता है। परन्तु यह व्याख्या एकांतवादी होती है अर्थात् पदार्थ के अनंत गुणों में से कुछ ही गुणों का वर्णन करती है। उदाहरण के तौर पर गणित का सूत्र यह बताता है कि एक समकोण त्रिभुज में दो लम्ब भुजाओं के वर्ग का योग तीसरी भुजा के वर्ग के बराबर होता है। यह सूत्र इसके अतिरिक्त वस्तु की कोई जानकारी नहीं देता, जैसे वस्तु त्रिभुजाकार ही है या उसका एक भाग त्रिभुजाकार है, वस्तु ठोस है या पोली है, वस्तु किस पदार्थ की बनी है, उसका रंग कैसा है, इत्यादि। इसलिए गणितीय सूत्र के आधार पर यदि किसी अज्ञात वस्तु का अनुमान किया जाता है तो वह एक पक्षीय और अपूर्ण होगा। फिर भी विज्ञान में गणित बहुत उपयोगी है और इसके आधार पर समान अवस्था में पदार्थ के व्यवहार का पूर्व अनुमान सफलतापूर्वक किया जा सकता

है। जीव में स्व ज्ञान होने से उसके व्यवहार का गणितीय पद्धति से पूर्व अनुमान निश्चित रूप से नहीं किया जा सकता है।

जैन दर्शन सर्वज्ञ प्रणीत माना गया है। जैन धर्म के अनुयायी बहुत श्रद्धा से आगम श्रुत को जिनवाणी के रूप में प्रतिष्ठित कर उसमें विश्वास करते हैं और तदनुरूप आचरण करने का प्रयास भी करते हैं। श्रद्धा और आस्था के समक्ष तर्क का कोई स्थान नहीं होता। परन्तु समस्त विज्ञान तर्क और प्रयोगों पर ही आधारित है। इसलिए विज्ञान का विद्यार्थी आगम वाणी को भी विज्ञान की भाँति तर्क की कसौटी पर कसना चाहता है। इतिहास बताता है कि श्रुत में भी कालक्रम से कुछ लोप, आंशिक क्षय, संशोधन और विक्षेप हुए हैं। इसलिए वर्तमान में उपलब्ध श्रुत की परीक्षा करने में कोई आपत्ति नहीं होनी चाहिए। सत् एक ही होता है और वह सभी कसौटियों पर खरा उतरता है। इसलिए आगम श्रुत भी यदि सत् है तो विज्ञान की कसौटी पर खरा ही सिद्ध होगा। आचार्य सिद्धसेन ने भी परीक्षा के उपरांत ही श्रुत को स्वीकार करने का उल्लेख किया है।

विज्ञान और आत्मज्ञान (केवल ज्ञान आदि) की तुलना के बारे में कुछ स्पष्टता आवश्यक है। कुछ लोग प्रश्न करते हैं कि केवली भगवान् सर्वज्ञ थे तो क्या उन्हें रेडियो, टेलीविजन, दूरदर्शी यंत्र, सूक्ष्मदर्शी यंत्र, हवाई जहाज, अंतरिक्ष यान, कम्प्यूटर, मोबाईल, एटम बम, जीव आदि (और भविष्य में बनने वाले उपकरण भी) के बारे में ज्ञान था? उत्तर है, ऐसे सब उपकरण अज्ञानियों (आत्म ज्ञान रहित) के लिए ही उपयोगी हैं, केवलज्ञानी के लिए नहीं। उदाहरण के लिए यह पता करना है कि मंगल ग्रह पर जीवन है या नहीं? हमें मालूम है कि विज्ञान की सहायता से इस कार्य को करने में कितनी उच्च तकनीक, प्रौद्योगिकी, धन, व्यवस्था और समय आदि की आवश्यकता होती है। फिर भी प्रयास करने पर यह निश्चित नहीं कि सफलता मिल ही जाएगी। केवल ज्ञानी अपने ज्ञान के बल पर तत्क्षण इसका उत्तर दे देता है। उसे किसी साधन की आवश्यकता नहीं। केवलज्ञानी मंगल ग्रह ही नहीं दूर अंतरिक्ष में अन्य ग्रह, नक्षत्रों की भी पूर्ण जानकारी दे देते हैं, जहाँ विज्ञान की पहुँच अभी संभव ही नहीं है। आगम के अनुसार केवलज्ञानी समस्त लोक में विद्यमान सभी जीव व पुद्‌गल की तीन काल में सभी पर्यायों को प्रत्यक्ष ज्ञान से युगपत् जानते हैं। आगम में और योग शास्त्र आदि अन्य ग्रंथों में, ऋद्धि सिद्धि आदि अतीन्द्रिय क्षमताओं का वर्णन प्राप्त होता है जिनसे ऋषि मुनि आदि आत्मज्ञानियों की शक्तियों का परिचय मिलता है। भौतिक संसाधन सामान्य मनुष्यों के लिए ही उपयोगी और महत्वपूर्ण हैं। मानव बुद्धि से निर्मित संसाधनों की उच्च ज्ञानधारी आत्मज्ञानियों को न तो आवश्यकता है और न उपयोगिता, उनके लिए ये सब अप्रासंगिक हैं।

विज्ञान सापेक्ष, अपूर्ण और एकांतवादी होते हुए भी श्रुत को समझने में सहायक हो सकता है और उसकी परीक्षा के लिए एक उपयुक्त कसौटी प्रस्तुत करता है। जैन दर्शन का आधुनिक विज्ञान से साम्य

आवश्यक नहीं है परन्तु हमारे पास विवेक की जो कसौटी है उसके अनुसार तर्कपूर्ण समाधान तो अपेक्षित है। आगम और विज्ञान के बारे में प्रो. श्री महेन्द्र कुमार जी के निम्नलिखित विचार महत्वपूर्ण हैं।

1. जिनेश्वर देव द्वारा प्रवेदित तथ्य को हमने सही रूप में समझा है या नहीं। आगम-वचन की विवक्षा क्या है, किस दृष्टि से किस बात को कहा गया है, इसकी पर्याप्त समझ के बिना मूल में ही आगम-वचन के नाम पर हम कोई ऐसी बात तो नहीं कर रहे हैं जो जिनेश्वर द्वारा विवक्षित न हो। प्रत्येक वचन उसके सही परिप्रेक्ष्य में ही समझना नय दृष्टि का मन्तव्य है। पूर्वापर प्रसंग, शब्दों के विभिन्न अर्थ, दृष्टिकोण या अपेक्षा के सम्यग् बोध के बिना आगम-वचन का तात्पर्य कैसे समझेंगे? इसलिए निःशंक और सत्य बात तक पहुँचने के लिए प्रयत्न होना चाहिए।
2. विज्ञान द्वारा जो सूचना मिल रही है, उसे भी आगम एवं अन्य प्रमाणों के आधार पर कस कर स्वीकार्य मानना होगा। न विज्ञान की बात को आँखें बंदकर स्वीकार करना, न ही उसके विरोध में पूर्वाग्रह रखना। युक्ति युक्त एवं आगम-विरुद्ध तथ्यों को तटस्थतापूर्वक समझने की कोशिश करना यही उचित, समीचीन एवं उपादेय लगता है।
3. बात आगम की हो या विज्ञान की, पहले हमारी समझ को सही बनाना जरूरी है। यदि आगम के नाम पर या विज्ञान के नाम पर हम उसे समझे बिना किसी बात का प्रसारण कर देंगे तो न्याय नहीं होगा।
4. किसी भी तत्व निर्णय का उद्देश्य सुविधा-असुविधा, प्रचार-प्रसार में उपयोगिता, आधुनिकता का व्यामोह आदि नहीं होना चाहिए।
5. जिन विषयों में आगम न साधक है, न बाधक है, उनके संबंध में बुद्धि तर्क और विज्ञान के माध्यम से संगत यथार्थ के विषय में विचार करने में कोई आपत्ति नहीं होनी चाहिए।

वैज्ञानिक परिपेक्ष्य में आगम के अध्ययन और परीक्षण से कई लाभ हैं।

- वे तथ्य जो आगम के सूत्र रूप में उपलब्ध हैं और स्पष्ट नहीं हैं उनकी समझ में वृद्धि हो सकती है।
- तत्वों की तर्कपरक व्याख्या संभव हो जाती है। तत्वों और तथ्यों की वैज्ञानिक व्याख्या से उसकी वैज्ञानिकों, दार्शनिकों और विद्वानों में स्वीकारोक्ति आसान हो जाती है।
- पुद्गल की अनंत पर्यायों में से कुछ का ही वर्णन आगम में प्राप्त होता है। हमारा लक्ष्य होना चाहिए निरंतर नई पयार्य की खोज। विज्ञान इसमें बहुत सहायक सिद्ध हो सकता है।
- आगम अमूल्य ज्ञान का स्त्रोत है और वैज्ञानिक प्रगति के लिए भी बहुत उपयोगी है। जैन दर्शन के वैज्ञानिक अध्ययन से ही पता चलता है कि जैन दर्शन विज्ञान को क्या दे सकता है।

जैन दर्शन के वैज्ञानिक अध्ययन का क्रम अब चल पड़ा है।और आशा की जाती है कि भविष्य में जैन दर्शन विज्ञान जगत में भी एक प्रकाश स्तंभ का कार्य करेगा।

क्षमा

श्रीपाल जैन 'दिवा'

क्षमा नहीं जिस हृदय में, वह पाषाण कठोर ।
सूखे करुणा स्रोत सब, दुखिया महानिठोर ।।
क्षमा सूख काँटा हुई, कंटक क्रोध हजार ।
चुभे स्वयं को रात दिन, बैर पीर निस्सार ।।
करुणा से भीगा नहीं, निरा दया से दूर ।
क्षमा बीज क्रोधग्नि से, जला धर्म से दूर ।।
क्षमा हृदय आकाश कर, सरल तरल जग जीत ।
अवगाहन सब जीव का, रहे सदा जग मीत ।।
जहाँ क्षमा वहाँ क्रोध नहीं, नहीं कलह का काम ।
करुणा नेह नद उमड़ता, घर-घर शान्तिधाम ।।
ईर्ष्या नहीं न क्रोध हो, वहाँ क्षमा आकाश ।
सभी समावे मीत सब, मुक्त कलह के पाश ।।
क्षमा गंग के स्रोत में, बहे क्रोध लाचार ।
ईर्ष्या वश चलता नहीं, कलह रोय बेजार ।।
दया भाव जिस हृदय में, वहीं क्षमा का वास ।
सहनशील आकाश उर, उस उर जग का वास ।।
बैर क्रोध का मुरब्बा, ईर्ष्या घी में आग ।
क्षमा जहाँ होवे नहीं, जगे कलह के भाग ।।
क्रोध ईर्ष्या मिल गये, पके बैर हो जाय ।
बैर कलह पल-पल करे, क्षमा उसे शान्ताय ।।
बात-बात में जब कलह, बात बतंगड़ होय ।
क्रोध ईर्ष्या में सना, घर मसान ही होय ।।
धरती सहती सुजन कुजन, छेद छेद खोदे मसे ।
अन्न फसल फल दे उन्हें, मधु कटु रस से रसे ।।
सहन शील धरती बड़ी, सहे जगत आघात ।
फिर भी पालन वह करे, मीत सदा जग मात ।।
क्षमा हीन मतिदीन है, समरसता से हीन।
बिना मीत सत्संग के, कुमति कुसँग आधीन ।।
क्षमा कृपण क्रोधीमहा, ईर्ष्या गाँठ लगाय ।
बैर फले भय में पले, शंका आग लगाय ।।
क्षमा हृदय में हो सदा, गौरव बढ़ता नित्य ।
क्षमा प्रभावक प्रिय सदा, मिले बड़प्पन सत्य ।।

'मूकमाटी' : भावों के बिन्दु, रेखाएँ और तल

- प्रो. लक्ष्मी चन्द्र जैन

'मूकमाटी' महाकाव्य या खण्ड काव्य आचार्य श्री विद्यासागर जी मुनि महाराज की एक अद्‌भुत कृति है जिसमें आत्मा के भव्य परिणामों की सशक्त लहरें अप्रतिम शैली में अभिव्यक्ति पा सकी हैं। मूकमाटी नायक और शिल्पी अधिनायक के आलम्बन द्वारा प्राचीन भारतीय संस्कृति से लेकर अर्वाचीन संस्कृति का भावात्मक एवं समग्र चित्रण गहरी, अत्यंत गहन अनुभूतिमय साधनों द्वारा प्रस्तुत किया गया है। अभी तक हिन्दी में ऐसी मौलिक रचना देखने में नहीं आई है जिसमें व्यक्तिवाद, समाजवाद, आतंकवाद आदि अनेक उलझे-सुलझे वादों का संवादों एवं विसंवादों, भाषा एवं अभाषा तथा भावों और अभावों द्वारा स्पष्टतम विश्लेषण किया गया हो। साथ ही धर्म नीति, अर्थ नीति, काम नीति, राजनीति, मोक्षनीति या यथायोग्य स्थानों पर सुरीतिया उल्लेख किया गया है। इस प्रकार आत्मा की अनादि से अन्त तक की कहानी को गागर में सागर भरकर एक रूहानी जहाँ की प्रस्तुति अपने आप में एक पैरेडिग्म शिफ्ट है जो युग-युगान्तरों में ही दुर्लभता से देखने में आता है। महान् तपस्वी एवं कविहृदय आचार्यश्री ने सत्य महाव्रत से संलग्न, आधुनिक प्रसंगयुक्त ऐसे सत्य को हित-मित-प्रिय रूप में इस कृति में आविर्भावित किया है । जिसके संबंध में कहा जाता है -

सत्य स्वयं की है जो कसौटी, नहीं चाहती अन्य परसको।
स्वर्ण शुद्धतम से भी शुद्धता, नहीं मांजना अति कर उसको ।।

वस्तुत : मुक्ति मार्ग तो कंटकाकीर्ण है ही, उसका निरूपण भी कला, विज्ञान और तन्त्र का संयुक्त प्रयास हुआ करता है जिसमें आचार्य श्री की लेखनी अनदेखे, अनजाने, अनसुने रूप में सिद्धहस्त है।

मेरे जैसे गणितज्ञ एवं वैज्ञानिक को इसमें क्या उपलब्ध हो सकता है, दिखाई दिया है, उसकी एक झलक देना आवश्यक तो है ही, प्रेरणास्पद भी हो सकता है। प्रेरणास्पद साहित्य ही चिरजीवी (Classical) एवं अमर हुआ करता है और विश्वविद्यालयों में हर शोभा को प्राप्त कर लेता है। हम इसके खण्डशः कुछ अंश उद्‌धृत करते हुए उन गहराइयों और ऊँचाईयों के बिन्दु, रेखापथ तथा तलों को स्पर्श करते चलेंगे जो मुसाफिर को अपनी मंजिल तक पहुँचने में अपने मार्ग में मिलते चले जाते हैं। यहाँ परिणामों की भावों की पहुँच के मापदण्ड क्या हों, यह तो अपनी-अपनी रुचि का ही प्रश्न बनकर रह सकता है।

सन्धिकाल का अपना विशेष महत्व है और सन्धि श्रेयसी की पहचान, दुरभि-सन्धि के अभाव रूप प्रस्तुति यह है :

''न निशाकर है, न निशा / न दिवाकर है न दिवा / अभी दिशायें भी अन्धी हैं,
पर की नासा तक/इस गोपनीय वार्ता की गन्ध/ ..... जा नहीं सकती !
ऐसी स्थिति में / उनके मन में / कैसे जाग सकती है /..... दुरभि-सन्धि वह!''

भावाधारा या मनोहृदय धारा, संगति गुण से अनेक रूप फलित होती चली जाती है जो जीवन धारा का रूप ले लेती है :

'' और यह भी देख !/ कितना खुला विषय है कि / उजली-उजली जल की धारा
बादलों से झरती है/ धरा-धूल में आ धूमिल हो/दल-दल में बदल जाती है।
वही धारा यदि / नीम की जड़ों में जा मिलती/कटुता में ढलती है,
सागर में जा गिरती/लवणाकर कहलाती है / वही धारा, बेटा !
विषधर मुख में जा / विष-हाला में ढलती है, /सागरीय शुक्तिका में गिरती,
यदि स्वाति का काल हो,/मुक्तिका बन कर / झिलमिलाती बेटा
वही जलीय सता....!'' (पृ.८)

फिसलन होने पर अभय दिलाने वाली पंक्तियाँ ये हैं :

''भले ही वह/ आस्था हो स्थायी / हो दृढ़ा, दृढ़तरा भी / तथापि
प्राथमिक दशा में / साधना के क्षेत्र में / स्खलन की सम्भावना
पूरी बनी रहती है, बेटा ! स्वस्थ-प्रौढ़ पुरुष भी क्यों न हो
काई-लगे पाषाण पर / पद फिसलता ही है!'' (पृ. ११)

संप्रेक्षण आज के युग में अत्यधिक महत्व को प्राप्त हुआ है, जिसकी परिभाषा कवि ने इस प्रकार दी है :

''विचारों के ऐक्य से/आचारों के साम्य से/सम्प्रेषण में/निखार आता है,
वरना/विकार आता है!/बिना बिखराव/उपयोग की धारा का
दृढ़ तटों से संयत, /सरकन-शीला सरिता-सी/लक्ष्य की ओर बढ़ना ही
सम्प्रेषण का सही स्वरूप है।'' (पृ. २२)

शिल्पी के कार्य (चाहे वह ताजमहल ही क्यों न हो) की पुनीत महत्ता को कौन अमान्य करेगा?

''सरकार उससे / कर नहीं माँगती / क्योंकि / इस शिल्प के कारण
चोरी के दोष से वह / सदा मुक्त रहता है / अर्थ का अपव्यय तो
बहुत दूर / अर्थ का व्यय भी/ यह शिल्प करता नहीं, / बिना अर्थ
शिल्पी को यह / अर्थवान बना देता है;/ युग के आदि से आज तक
इसने / अपनी संस्कृति को / विकृत नहीं बनाया/ बिना दाग है यह शिल्प
और कुशल है यह शिल्पी।'' (पृ. २७-२८)

शिल्पी की योगशाला, प्रयोगशाला पर एक टिप्पणी यह है :

''यहाँ पर / जीवन का निर्वाह' नहीं / 'निर्माण' होता है
इतिहास साक्षी है इस बात का ।/ अधोमुखी जीवन
ऊर्ध्वमुखी हो / उन्नत बनता है; / हारा हुआ भी
बेसहारा जीवन / सहारा देनेवाला बनता है !'' (पृ. ४३)

पापी से नहीं, पाप से घृणा करने सम्बन्धी धर्म-नीति ईसा की पापी महिला-रक्षा से सम्बन्धित है :

''ऋषि-सन्तों का/सदुपदेश-सदादेश/हमें यही मिला कि
पापी से नहीं/पाप से/ पंकज से नहीं,/पंक से/ घृणा करो।'' (पृ. ५०-५१)

सल्लेखना का रहस्य भी योगियों, व्रतियों, श्रावकों को जानने योग्य है। वस्तुतः शरीर और कषाय के कृश होने पर ही तो करणत्रय की लग्न आती है वह इस प्रकार वर्णित है।

''सल्लेखना, यानी / काय और कषाय को/कृश करना होता है बेटा !
काया को कृश करने से/कषाय का दम घुटता है /....घुटना ही चाहिए।
और,/काया को मिटाना नहीं,/मिटती-काया में/मिलती-माया में
म्लान-मुखी और मुदित-मुखी/नहीं होना ही/ सही सल्लेखना है, अन्यथा
आतम का धन लुटता है, बेटा।'' (पृ. ८७)

परम आर्त और परम अर्थ गहराई यह है :

''सूक्ष्माति-सूक्ष्म दोष की पकड़ / ज्ञान का पदार्थ की ओर / ढुलक जाना ही
परम आर्त पीड़ा है,/ और/ ज्ञान के पदार्थों का/ झलक आना ही-
परमार्थ क्रीड़ा है/ एक दीनता के भेष में है/हार से लज्जित है,
एक स्वाधीनता के देश में है/सार से सज्जित है।
पुरुष की पिटाई प्रकृति ने की,/प्रकारान्तर से चेतना भी/ उसकी चपेट में आया
गुणी के ऊपर चोट करने पर/गुणों पर प्रभाव पड़ता ही है/ आघात मूल पर हो
द्रुम सूख जाता है,/दो मूल में सलिल तो.../पूरण फूलता है।'' (पृ. १२४-१२५)

अर्थशास्त्री को अर्थ के अर्थ की ओर परमार्थ के पलड़े की चुनौती निम्नपंक्तियों में प्रस्तुत की गई है जो रागी का लक्ष्यबिन्दु अर्थ और त्यागी का परमार्थ दर्शाता है :

''अन्तिम भाग, बाल का भार भी/ जिस तुला में तुलता है
वह कोयले की तुला नहीं साधारण-सी,/ सोने की तुला कहलाती है असाधारण!
सोना तो तुलता है/ सो.... अतुलनीय नहीं है / और / तुला कभी तुलती नहीं है
सो.... अतुलनीय रही है/ परमार्थ तुलता नहीं कभी/ अर्थ की तुला में
अर्थ को तुला बनाना/अर्थशास्त्र का अर्थ ही नहीं जानना है
और / सभी अनर्थों के गर्त में / युग को ढकेलना है।
अर्थशास्त्री को क्या ज्ञात है यह अर्थ ?'' (पृ. १४२)

अनेकान्त का उदाहरण सापेक्षता के रहस्य में डूबा हुआ है :

''अगर सागर की ओर / दृष्टि जाती है, /गुरु-गारव सा
कल्प-काल वाला लगता है सागर; / अगर लहर की ओर/दृष्टि जाती है,
अल्प-काल वाला लगता है सागर।/ एक ही वस्तु

अनेक भंगों में भंगायित है / अनेक रंगों में रंगायित है, तरंगायित!
मेरा संगी संगीत है / सप्त-भंगी रीत है ।'' (पृ. १४६)

करुणा के द्वारा प्रकृति पर्यावरण की सुनिश्चित सुरक्षा इन पंक्तियों में निहित है :

''प्रकृति माँ की आँखों में / रोती हुई करुणा, / बिन्दु-बिन्दु कर के
दृग-बिन्दु के रूप में / करुणा कह रही है / कण-कण को कुछ :
परस्पर कलह हुआ तुम लोगों में / बहुत हुआ, वह गलत हुआ।
मिटाने-मिटने को क्यों तुले हो / इतने सयाने हो! / जुटे हो प्रलय कराने
विष से धुले हो तुम !/ इस घटना से बुरी तरह / माँ घायल हो चुकी है
जीवन को मत रण बनाओ/ प्रकृत माँ का वृण सुखाओ'!'' (पृ. १४८-१४९)

कविता में एक अभिनव नाटकीय ढंग से अंकों का प्रयोग कर मंज़िल की पहचान प्रस्तुत की गई हैः

''९९ और ९ की संख्या / जो कुम्भ के कर्ण-स्थान पर
आभरण-सी लगती अंकित हैं/ अपना-अपना परिचय दे रही हैं।
एक क्षार संसार की द्योतक है/ एक क्षीर-सार की।
एक से मोह का विस्तार मिलता है,/ एक से मोक्ष का द्वार खुलता है।'' (पृ. १६६)

जड़ और चेतन की परख कराना विश्व चेतना को जाग्रत करना है :

''भोग पड़े हैं यहीं/भोगी चला गया,/योग पड़े हैं यहीं/योगी चला गया,
कौन किस के लिए-/धन जीवन के लिए/या जीवन धन के लिए?
मूल्य किसका/तन का या वेतन का,/जड़ का या चेतन का?'' (पृ. १८०)

नीति विषयक एक लेश्या प्रसंग निम्नलिखित हैः

''जब सुई से काम चल सकता है/तलवार का प्रहार क्यों?
जब फूल से काम चल सकता है/शूल का व्यवहार क्यों?
जब मूल में भूतल पर रह कर ही/फल हाथ लग रहा है
तब चूल पर चढ़ना/मात्र शक्ति-समय का अपव्यय ही नहीं,
सही मूल्यांकन का अभाव भी सिद्ध करता है।'' (पृ. २५७)

कसौटी के प्रति कवि के विचार एक नवीन रहस्य को प्रस्तुत करते हैंः

''अपनी कसौटी पर अपने को कसना/बहुत सरल है.... पर
सही-सही निर्णय लेना बहुत कठिन है,/क्योंकि,/अपनी आँखों की लाली
अपने को नहीं दिखती है।/एक बात और भी है, कि
जिस का जीवन औरों के लिए/कसौटी बना है/वह स्वयं के लिये भी बने,
यह कोई नियम नहीं है।/ऐसी स्थिति में प्रायः/मिथ्या-निर्णय लेकर ही

अपने आप को प्रमाण की कोटि में/स्वीकारना होता है... सो
अग्नि के जीवन में सम्भव नहीं है।'' (पृ. २७६)

जड़ की जड़ता का स्वरूप विलक्षण होता है। उसकी पहचान कराने कवि ने 'समयसार' ग्रन्थ की शैली अपनाई है :

''जहाँ तक इन्द्रियों की बात है/उन्हें भूख लगती नहीं,/बाहर से लगता है कि
उन्हें भूख लगती है।/रसना कब रस चाहती है,/नासा गन्ध को याद नहीं करती,
स्पर्श की प्रतीक्षा स्पर्शा कब करती?/स्वर के अभाव में
ज्वर कब चढ़ता है श्रवणा को?/बहरी श्रवणा भी जीती मिलती है।
आँखें कब आरती उतारती हैं/रूप की स्वरूप की?/ये सारी इन्द्रियाँ जड़ हैं,
जड़ का उपादान जड़ ही होता है,/जड़ में कोई चाह नहीं होती
जड़ की कोई राह नहीं होती/सदा सर्वत्र सब समान
अन्धकार हो या ज्योति।'' (पृ. ३२८-३२९)

राग-विराग विधि का निदर्शन भी कवि की प्रतिभा का द्योतक हैः

''गगन का प्यार कभी/धरा से हो नहीं सकता/मदन का प्यार कभी
जरा से हो नहीं सकता;/यह भी एक नियोग है कि/सुजन का प्यार कभी
सुरा से हो नहीं सकता।/विधवा को अंग-राग/सुहाता नहीं कभी
सधवा को संग-त्याग/सुहाता नहीं कभी,
संसार से विपरीत रीत/विरलों की ही होती है
भगवाँ को रंग-दाग/सुहाता नहीं कभी!'' (पृ. ३५३-३५४)

औषधि, जो जन्म-जरा-मृत्यु रोगहारी हो, उसका रहस्य प्रस्तुत करने में कवि ने सम्भवतः अपने अनुभव से शकार-त्रय रूप दिग्दर्शित किया है :

''तात्कालिक/तन-विषयक-रोग ही क्या,/चिरन्तन चेतन-गत रोग भी/जो
जनन-जरन मरण रूप है/नव-दो-ग्यारह हो जाता है पल में/श, स, ष
ये तीन बीजाक्षर हैं/इन से ही फूलता-फलता है वह
आरोग्य का विशाल-काय वृक्ष!/इनके उच्चारण के समय/पूरी शक्ति लगा कर
श्वास को भीतर ग्रहण करना है/ और /नासिका से निकालना है
ओंकार-ध्वनि के रूप में।'' (पृ. ३९७-३९८)

आतंकवाद का चिर प्रतिष्ठित रूप निम्नलिखित पंक्तियों में निरुपित किया गया हैः

''पुनरावृत्ति आंतक की-/वही रंग है वही ढंग है / अंग-अंग में वही व्यंग्य है,
वह मूर्ति है वही मुखड़े/ वही अमूर्च्छित-तनी मूँछें/वही चाल है वही ढाल है
वही छल-बल वही उछाल है/क्रूर काल का वही भाल है

वही नशा है वही दशा है/काँप रही अब दिशा-दिशा है
वही रसना है वही वसना है/किसी के भी रही वश ना है
सुनी हुई जो वही ध्वनि है/वही वही सुन! वही धुन है
वही श्वास है अविश्वास है / वही नाश है अट्टहास है / वही ताण्डव-नृत्य है
वही दानव-कृत्य है/वही आँखे हैं सिंदूरी हैं/भूरि-भूरि जो घूर रही हैं
वही गात है वही माथ है। वही पाद है वही हाथ है/ घात-घात में वही साथ है,
गाल वही है अधर वही है/लाल वही है रुधिर वही है/भाव वहीं है दाँव वही है
सब कुछ वही नया कुछ नहीं,/जिया वही है दया कुछ नहीं।'' (पृ. ४५५)

आचार्य श्री विद्यासागर ने अपने गुरु आचार्य श्री ज्ञानसागर को समर्पण करते हुए इस 'मूकमाटी' के प्रारम्भ में 'मानस-तरंग' देकर अपने अभिप्राय को पूर्णरूपेण स्पष्ट किया है। प्रयोजन रूप प्ररूपित करने उन्होंने अन्तिम वाक्य जोड़ा हैः जिसने शुद्ध-सात्त्विक भावों से सम्बन्धित जीवन को धर्म कहा है; जिसका प्रयोजन सामाजिक, शैक्षणिक, राजनैतिक और धार्मिक क्षेत्रों में प्रविष्ट हुई कुरीतियों को निर्मूल करना और युग को शुभ-संस्कारों से संस्कारित कर भोग से योग की ओर मोड़ देकर वीतराग श्रमण-संस्कृति को जीवित रखना है... और जिसका नामकरण हुआ है 'मूकमाटी' ।

'मूकमाटी' के पूर्व आपके द्वारा सृजित हिन्दी रचनाएँ और संस्कृत की शतक रचनाएँ, जो बिखरे मोती कही जा सकती हैं, अभूतपूर्व रचनाएँ हैं। उनमें भी 'मूकमाटी' के उसी पक्ष का निखार, उभार है जो नैतिकता और त्याग, तपस्या, वैराग्य के कठोर अनुशासन से अनुप्राणित है। जन्म से कन्नड़ भाषी होते हुए भी हिन्दी में असाधारण रचनाएँ रचकर तथा 'मूकमाटी' जैसे महाकाव्य का निर्माण कर कवि ने अप्रतिम प्रतिभा का परिचय दिया है जो उनकी संस्कृत में की गई कृतियों में भी झलकती है। उन्होंने दर्शन, धर्म एवं अध्यात्म की आधार शिलाओं पर ही व्यक्ति, समाज, देश और सम्पूर्ण विश्व को अपना स्वयं का एक दर्शन अवतरित कर समर्पित किया है जो उनकी कृति 'मूकमाटी' में स्पष्ट रूप से झलक आया है। इस दर्शन की भाषा निराली है, सरल है, सत्य अनुगामी है, व्युत्पत्तिपरक है। इस दर्शन का रहस्य उनका उच्चतम कोटि का योग है। यह योग ज्ञान, चारित्र और तपस्या से ओतप्रोत है। यह विलक्षणता उन्हें एक ऐसे स्वतंत्र विचारक एवं रचयिता के रूप में ढाल लाई है कि जिसका प्रतिफलन आज देश में वैचारिक क्रान्ति उस युवावर्ग में पनपी दिखाई दे रही है जो विलास के सम्पूर्ण साधनों से दूर नहीं था।

यह वैचारिक क्रान्ति सहृदयता एवं अनुशासन की आधार शिलाओं पर पनपी है, खड़ी है, अतः उसे 'मूकमाटी' की छाया कहना उचित होगा। आशा है, अगली पीढ़ी के हाथों में भी 'मूकमाटी' होगी जो उन्हें सशक्त, सक्षम एवं सहृदय अनुशासित नागरिक बनाने में पूरा योगदान दे सकेगी।

आचार्य श्री एवं कवि श्री विद्यासागर जी की अनेक कृतियों पर विश्वविद्यालयों में शोध कार्य प्रारम्भ हो चुके हैं, कुछ समाप्त भी हो चुके हैं। यदि शोधपरक कार्य उनके क्रान्तिकारी दर्शन को लेकर हो सके, जो 'मूकमाटी' में उजागर हुआ है, झलका है तो उनके प्रकाशन से भूले-भटके, रूढ़िवादी, पिछड़े समाज एवं देश को एक नई दिशा, नया आयाम, नया मार्ग प्राप्त हो सकेगा, इसमें कोई सन्देह नहीं है।

सम्यक् ध्यान शतक

मुनि श्री आर्जवसागर

गतांक से आगे................

आतम हित शिव सौख्य है, आकुलता से दूर ।
रत्नत्रय से प्राप्त हो, आत्म गुणों से पूर ।।

मन यह वानर सम कहा, बड़ी चपलता मान।
ज्ञान, ध्यान में लीन जब, आत्म शान्ति सुख जान।।

मनस् भूत को धर्म में, सदा लगाना धर्म।
पाप बंध से दूर हो, पाते समता शर्म ।।

अक्ष खिड़कियों से सदा, विषय पवन का जोर।
अगर बंद हों खिड़कियाँ, निज सुख की हो भोर।।

पैर व मुख अन्दर करे, कछुआ पीठ दिखाय ।
बाधक से ध्यानी बचे, संयम सुख महकाय ।।

वायु बहती वेग से, जल में उठें तरंग ।
विषयों की वायु रुके, निर्मल आत्म विरंग ।।

रवि किरणें बिखरी तपें, कागज जला न देत ।
कांच साथदुर्बीन का, भस्मसात् कर देत ।।

मन पूरे जग में फिरे, एक जगह न ध्यान ।
केन्द्रित निज में कर्म तब, क्षय हो केवलज्ञान ।।

समता, ध्यान समाधि वा, गुप्ति शुद्धोपयोग ।
निजानुभव निश्चय कहो, यथाख्यात सत्योग ।।

द्रव्य, क्षेत्र, सु-काल सह, भाव जीव पाता ।
समता ध्यानादिक मिलें, सु-योग्य वह भाता ।।

साहित्य-समीक्षा

पं. लालचन्द्र जैन 'राकेश', भोपाल

कृति का नाम : जैनागम संस्कार
लेखक : मुनि श्री १०८ आर्जवसागर महाराज जी
प्रकाशक : भगवान महावीर आचरण संस्था समिति, भोपाल

आज के इस वैज्ञानिक एवं भौतिकतावादी युग में धन-वैभव के मूल्य तो बढ़ रहे हैं। आतंकवाद फल-फूल रहा है जबकि शांति-सन्तोष-समता-संस्कार एवं भ्रातृभाव मानवजीवन से तिरोहित होते जा रहे हैं। ऐसी विषम स्थिति में अभीक्ष्ण ज्ञान सम्पदा से सिक्त मुनि श्री आर्जवसागर जी द्वारा रचित ग्रंथ 'जैनागम संस्कार' इस अँधेरे को चीरने में दिनमणि के समान है। मुनिश्री करुणा एवं वात्सल्य के रत्नाकर हैं। उत्कृष्ट संस्कार उत्पन्न कर मानव जीवन को सार्थकता प्रदान करने वाला यह ग्रंथ संतश्री के इन्हीं गुणों का अमृत फल है।

मानव जीवन एक चित्र के समान है इसे संस्कार के रंगों में जितना रोशन किया जायगा वह उतना ही सुन्दर सिद्ध होगा। यह ग्रंथ संस्कारों का सागर है। इसमें मुनिश्री ने आदर्श नागरिक एवं श्रेष्ठ इंसान बनने के लिए 21 अध्याय रूपी स्वर्ण कलशों में 805 प्रश्नोत्तर रूपी रत्न भरकर सुख-शांति एवं संस्कार का अमूल्य उपहार दिया है। जो जिज्ञासु जैनागम के हार्दको समझकर आत्मकल्याण के इच्छुक हैं उन्हें इस ग्रंथ का नित्यश: पारायण कर चर्या में उतारना चाहिए।

मुनिश्री ने इस कृति का शुभारम्भ ग्रंथ के मंगलाचरण स्वरूप मंगलोत्तम महामंत्र श्री णमोकार मंत्र से किया है और समापन नैतिकता एवं शिष्टाचार से। वर्णन का यह क्रम सूचित करता है कि जिसके जीवन का मंगलप्रभात णमोकार महामंत्र के स्मरण से होगा उसके जीवन में नैतिकता एवं शिष्टाचार का सूर्योदय अवश्यंभावी है। इन दोनों ध्रुवों के मध्य मुनिश्री ने क्रमश: भावकोचित कर्तव्यों का पालन, अष्टमूलगुणों का आचरण, सम्पूर्ण व्यसनों का त्याग, देवपूजन रत्नत्रय, षट्द्रव्य, सप्त तत्व, लोकत्रय स्वरूप, श्रमणचर्या, समाधिमरण, पर्व एवं व्रत, अष्टकर्म, गुणस्थान, अध्यात्म में उपयोग एवं स्वरूपाचरण चरित्र का सरल-सरसभाषा में वर्णन किया है और अन्त में अनेकान्त दृष्टि द्वारा द्रव्य एवं पर्याय दृष्टि, निश्चय एवं व्यवहार, निमित्त एवं उपादान तथा क्या पुण्य हेय है? जैसे कठिन विषयों पर आगम सम्मत निर्णयों से हमें उपकृत किया है। अत: बालबोधाय लिखी गई यह कृति सर्वबोधाय हो गई है। इस कृति की उपयोगिता के सम्बन्ध में मुनिश्री ने स्वयं लिखा है कि प्रश्नोत्तर मालिका के रूप में इस ''जैनागम संस्कार'' कृति में कुल 805 प्रश्नोत्तर लिखे गये हैं और इन्हीं प्रश्नोत्तरों के अन्तर्गत मन्दाग्निवाले व्यक्तियों के लिए भोजन के साथ-साथ चटनी के सदृश प्रश्नोत्तर के रूप में ही संक्षेप में कुछ उदाहरण (दृष्टान्त) भी उपस्थित किए गए हैं। जिन उदाहरणों के माध्यम से यह श्रुतज्ञान रूपी आहार नियम के सत्पात्रों के गले उतर जायगा, ऐसा मेरा विश्वास है।''मुनिश्री का यह भी भाव है कि उन्हें उनके गुरुमहाराज आचार्य श्री विद्यासागर जी से जो ज्ञान प्रसाद रूप में प्राप्त हुआ है उसे ही मैं पाठकों को वितरित कर रहा हूँ।''

संक्षेपण, सरल एवं प्रश्नोत्तर शैली में बाल बोधाय रचित सारगर्भित, बहुगुणमंडित यह कृति धार्मिक रुचि (रखने वाली) जैन समाज के लिए ऐसी अपूर्व देन है कि जिसकी अर्थवत्ता एवं उपयोगिता कभी कम नहीं होगी। मुनिश्री के चरणों में सादर नमोस्तुते।

परिचय-गवाक्ष

मुनि श्री आर्जवसागर जी महाराज

पं. लालचन्द्र जैन 'राकेश', भोपाल

कुण्डलपुर के बड़े बाबा के प्रभामंडल से सिक्त ग्राम फुटेरा कलाँ (दमोह म.प्र.) में शाश्वत पर्व भाद्रपक्ष शुक्ल अष्टमी (11.09.1967) को श्रीमती मायादेवी एवं श्री शिखरचन्द्र जैन को माता-पिता रूप में धन्य किया तथा बचपन में पथरिया (दमोह म.प्र.) के पत्थरों को पाथस् और पारस बनाया। शुभ नाम पाया श्री पारस चन्द्र जैन।

जीवन के अरुणोदय से ही संसार-शरीर और भोगों से विरक्त हो क्रमशः साधना के सोपानों पर आरोहण किया। संत शिरोमणि आचार्य श्री विद्यासागर का शिष्यत्व पा 19.12.1984 को श्री अतिशय क्षेत्र पनागर में ब्रह्मचर्य व्रत, इसी सन् में श्री अतिशय क्षेत्र आहार जी में सप्तम प्रतिमा, यहीं 8.11.1985 को क्षुल्लक दीक्षा, 10.07.1987 को श्री अतिशय क्षेत्र थूबौन में ऐलक दीक्षा तथा 31.03.1988 को श्री सिद्ध क्षेत्र सोनागिरी में मुनि दीक्षा धारण कर मुनि श्री आर्जवसागर जयवन्त हुए।

संगमरमर की तराशी मूर्ति जैसी सुन्दर-सुडौल-सुगठित-प्रभावक देहयष्टि, आलोकित उन्नत भालपट्ट, आँखों से झाँकती करुणा एवं बहती वात्सल्य की निर्झरिणी, भेदविज्ञान एवं वीतरागता को प्रकट करती नासाग्र दृष्टि प्राणिमात्र के प्रति अहिंसा एवं मैत्री को आमंत्रण देते अधर, चंद्रोज्ज्वल, पीयूषवर्षी मुखमंडल पर खेलती, अन्तस् के आनन्द को छलकाती सारल्यकी सरिता की समष्टि से निर्मित व्यक्तित्व का नाम है-मुनि श्री आर्जवसागर।

मुनि श्री आर्जवसागर जी के व्यवहार में विनम्रता, वाणी में मृदुता, भावों में सरलता और सरसता, अभिव्यक्ति में स्पष्टता, हृदय में गंभीरता, विचारों में शुचिता और श्रेष्ठता, आशीष में समता, आचरण में अकंप-दृढ़ता, ज्ञानोपयोग में अविरल-निरन्तर एवं चिन्तन में सूक्ष्मता के दर्शन होते हैं। आपकी झुकी पलकों में करुणा, अहिंसा, संवेदनशीलता, परदुःख कातरता, संयम, साधना एवं वीतरागता का सन्देश है।

संत श्रृंखला के अनमोल मणि, चतुर्थकालीन श्रमणचर्या के पालक, तपोनिष्ठ, तत्वचिन्तक, प.पू. मुनिश्री की सधी, आगम निष्ठ स्वर्णलेखनी से अनेक उत्कृष्ट कृतियाँ प्रसूत हुई हैं जिनमें धर्म प्रभावना शतक, जैनागम संस्कार, तीर्थोदय काव्य, परमार्थ साधना, बचपन का संस्कार, नेक जीवन प्रमुख हैं। अनेक अष्टक तथा हिन्दी, तमिल, मराठी में कविताएँ भी आपने लिखी हैं।

मुनि श्री के चरणों में सादर नमोस्तु।

मुनि श्री आर्जवसागर जी महाराज

- श्रीपाल जैन 'दिवा'

मुनि मौन धरे निज ध्याय, निज का ध्यान धरे।
निर्वाण भाव ही भाय, मार्ग विराग वरे ।।

श्री वाणी जिन देशाय, श्रावक ज्ञान भरे ।
आर्जव सागर सरलाय, ऋतुजा हृदय भरे।।

वर सुपथ सभी बतलाय, श्रोता स्वयं तरे ।
सागर से गहन गम्भीर, धरती धीर धरे ।।

गम गमक न मन में आय, आनन्द सदा भरे।
रम रमण करे स्वाध्याय, तप सब ताप हरे ।।

मन चेरा है अनुकूल, सुध्याने पारे ।
हरते निज पर दुख भार, पल में अनुसारे ।।

राजी हर पल मन साघ, ध्यानहि निज तारे ।
जमते रमते निज ध्याय, आतम हितकारे।।

दोनों नय स्वीकारो

जइ जिण मयं पवज्जह ता मा ववहारणिच्छए मुयह ।
एक्केण विणा छिज्जइ तित्थं अण्णेण उण तच्चं ।।

अर्थः यदि जिनमत का प्रवर्तन करना है तो व्यवहार और निश्चय दोनों ही नयों का त्याग मत करो क्योंकि एक (व्यवहारनय) के बिना मोक्ष मार्ग का खण्डन होता है और दूसरे (निश्चयनय) के बिना तत्व खण्डित होता है।

'आगमोक्त चिंतन' से साभार

इन्हें जानिए और लाभ लें

केन्द्र एवं राज्य शासनों के द्वारा समय-समय पर जनता को सुविधा प्रदान करने हेतु परिपत्र या अधिसूचनाएँ जारी की जाती हैं। उनकी समुचित जानकारी के अभाव में शासन द्वारा प्रदत्त सुविधाओं/व्यवस्थाओं का लाभ लेने से जन सामान्य वंचित रह जाता है। मध्यप्रदेश शासन के द्वारा निर्गमित तीन शासनादेशों को नीचे सूचित किया जा रहा है। इनके आधार से मध्यप्रदेश एवं छत्तीसगढ़ के निवासी इनका सुदुपयोग कर/करा सकते हैं। साथ ही अन्य राज्यों में स्थिति व्यक्ति अपने प्रदेश में इस प्रकार के शासनादेशों की जानकारी प्राप्त करके जन सामान्य को सुलभ कराने हेतु प्रचारित कर सकते हैं। कदाचित इस प्रकार के शासनादेश अन्य प्रान्तों में यदि वर्तमान में जारी नहीं किए गए हों तो प्रबुद्ध एवं जागरुक श्रावक, सामाजिक एवं धार्मिक संस्थाओं के पदाधिकारी, राजनैतिक दलों से सम्बद्ध कार्यकर्ताओं से भी अपेक्षा की जाती है कि इस प्रकार के शासनादेश अपने प्रदेशों में भी निर्गमित कराने हेतु सार्थक एवं समुचित प्रयास करें।

अ. मध्यप्रदेश के राज्यपाल के नाम तथा आदेशानुसार मध्यप्रदेश शासन के सामान्य प्रशासन विभाग के अवर सचिव बी.एस. वर्मा के हस्ताक्षर से परिपत्र क्रमांक/एम-3/15/85/1/4 भोपाल, दिनांक 2 अगस्त 1985 को प्रसारित किया गया था। इसमें 'अनंत चतुर्दशी के उपलक्ष्य में जैन धर्मावलंबी शासकीय कर्मचारियों को विशेष आकस्मिक अवकाश दिये जाने बाबत' निर्देश म.प्र. शासन के समस्त विभाग, अध्यक्ष-राजस्व मंडल-ग्वालियर, समस्त संभागाध्यक्ष, समस्त विभागाध्यक्ष एवं समस्त जिलाध्यक्षों को जारी किया गया था।

उपर्युक्त परिपत्र में निर्देशित है कि ''राज्य शासन द्वारा निर्णय लिया गया है कि अनंत चतुर्दशी पर्व के उपलक्ष्य में शासकीय सेवाओं/संस्थाओं में कार्यरत सभी जैन धर्मावलंबी कर्मचारियों को विशेष आकस्मिक अवकाश स्वीकृत किया जाय। यह विशेष आकस्मिक अवकाश उन्हीं कर्मचारियों को देय होगा जिन्होंने इस दिन के अवकाश के लिए प्रार्थना पत्र प्रस्तुत किया हो।''

ब. मध्यप्रदेश के राज्यपाल के नाम से तथा आदेशानुसार मध्यप्रदेश शासन के स्थानीय शासन विभाग के अवर सचिव एस.पी. वर्मा के हस्ताक्षर से परिपत्र क्रमांक 906/69 मं./18-3/90, भोपाल, दिनांक 18.5.90 को शासनादेश जारी हुआ था। इसमें 'विशिष्ट अवसरों पर पशुवध गृह बंद रखने बाबत' संचालक-नगर प्रशासन-भोपाल, समस्त जिलाध्यक्ष एवं समस्त संभागीय उपसंचालक-नगर प्रशासन-मध्यप्रदेश को परिपत्र निर्देशित किया है कि ''आपके क्षेत्र में स्थित समस्त स्थानीय निकायों को तदनुसार उचित कार्यवाही के लिए निर्देशित करें। इस विभाग ने अपने ही पूर्व के परिपत्र क्रमांक-5666/330/18/नगर/एक, दिनांक 16 अगस्त 1971 को निरस्त करते हुए राज्य शासन के उपर्युक्त परिपत्र के माध्यम से आदेशित किया है कि नीचे दिए गए विशिष्ट अवसरों पर, स्थानीय निकायों की सीमा में स्थित समस्त पशुवध गृह एवं मांस बिक्री की दुकानें बंद रखी जाया करें। राज्य शासन द्वारा

इस हेतु जिन 17 विशिष्ट अवसरों का निर्धारण किया है वे निम्नलिखित हैं :-

(1) गणतंत्र दिवस (2) गाँधी निर्वाण दिवस (3) महावीर जयंती (4) बुद्ध जयंती (5) स्वतंत्रता दिवस (6) गाँधी जयंती (7) रामनवमी (8) डोल ग्यारस (9) पर्यूषण पर्व पर प्रथम दिन (10) पर्यूषण पर्व पर अंतिम दिन (11) अनंत चतुर्दशी (12) जन्माष्टमी (13) संत तारण तरण जयंती (14) पर्यूषण पर्व में संवत्सरी व उत्तम क्षमा (15) भगवान महावीर के 2500 वें निर्वाण (16) चैती चाँद एवं (17) गणेश चतुर्थी।''

स. मध्यप्रदेश के राज्यपाल के नाम तथा आदेशानुसार मध्यप्रदेश के सामान्य प्रशासन विभाग के द्वारा परिपत्र क्रमांक एम-3-5/1990/1/4, भोपाल, दिनांक 17 जनवरी 1992 को निर्गमित हुआ था। इस परिपत्र के अनुसार जैन कर्मचारियों को राज्य शासन के द्वारा पर्यूषण पर्व में विशेष सुविधा प्रदान की गई है। इसमें उल्लेखित है कि ''राज्य शासन द्वारा श्वेताम्बर एवं दिगम्बर जैन धर्मावलम्बी कर्मचारियों को प्रतिवर्ष उनके पर्यूषण पर्व के लिये क्रमशः भाद्रपक्ष कृष्ण 11 से भाद्रपद शुक्ल पक्ष चतुर्थी या पंचमी तक और भाद्रपद शुल्क पक्ष 5 से भाद्रपद शुक्ल पक्ष 15 तक धार्मिक कृत्य करने के लिये कार्यालय में 12 बजे पहुँचने की सुविधा प्रदान की गई है, बशर्ते कि इससे शासकीय कार्य पर कोई विपरीत प्रभाव नहीं पड़े और कर्मचारी अपना कार्य अद्यतन रखें।''

पाठकों से अपेक्षा है कि उक्त तीनों परिपत्रों का मध्यप्रदेश एवं छत्तीसगढ़ में व्यापक प्रचार-प्रसार हेतु जिन मंदिरों, संस्थाओं के कार्यालयों, चातुर्मास स्थलों में नोटिस बोर्ड आदि के द्वारा जन सामान्यतक पहुँचाएँ, ताकि वे यथा समय सम्यक् परिपालन करा सकें।

संवर सहित हो निर्जरा

- योगेन्द्र दिवाकर

मोक्ष माने शिव मिले, अक्षय खरा ।
संवर सहित हो, निर्जरा ।।

शरीर के बिना, आत्माएँ मोक्ष में ।
सिद्ध परमेष्ठी, अमूर्तिक मोक्ष में ।।

निराकार परमात्माओं से शिवालय / मोक्ष भरा ।
मोक्ष का साम्राज्य शाश्वत चिर अपूर्व सौख्य से हरा ।।

सरस सरल है तीर्थोदय काव्य

प्रो. सुर्दशन लाल जैन, वाराणसी

दमोह में चातुर्मास के अवसर पर प.पू. से मुझे काव्य तीर्थोदय मिला जिसका मैंने अध्ययन किया और पाया कि आपने वास्तव में दर्शन जैसे गूढ़ और नीरस विषय को सरस एवं सरल काव्य के रूप में रूपान्तरित कर दिया है। इसमें प्रायः सभी शास्त्रीय सिद्धान्तों का शास्त्रीय परम्परा तथा आधुनिक विचार परम्परा का समावेश करते हुए सुखद सन्निवेश किया है, लगता है आर्जवसागर अपने गाम्भीर्य किन्तु शान्तमुद्रा में सुधा-रस जन-जन तक पहुँचा रहा है। 'विद्यासागर की पूर्णता आर्जवसागर में ही होती है' संभवतः इसीलिए आचार्य विद्यासागर ने योग्य शिष्य को पाकर आर्जव नाम से अलङ्कृत कर उसे अपूर्व पारसमणि बना दिया है जिसके स्पर्श से कोई भी प्राणी शुद्धावस्था (मोक्ष) को प्राप्त कर सकता है।

यह मेरा पुण्य-योग था कि आपका दर्शन मिला तथा आपके उपदेशामृत को सुनने एवं हृदयङ्गत करने का मौका मिला। याचना परिषह-जय की निम्न पंक्तियाँ कितनी मार्मिक हैं-

''सूख गया है तन मुनिवर का, त्वचा जली-सी है मानो।
तो भी भोजन दवा, वसति वे, नहीं माँगते हैं जानो।।
किसी वस्तु व भिक्षा के वश, दीन वचन ना कहें कभी।
स्वतः पुण्य से धर्म वस्तुएँ मिलें, मोह को तजे सभी ।।'' (पृ. ९७)

इन पंक्तियों में क्या नहीं है? मुनिचर्या है, उनका स्वरूप है, तपस्या है, उपादान निमित्त की व्याख्या है, जनता को उपदेश है, भोजनादि के लिये याचना नहीं है फिर भी याचना परिषहजय है।

अस्तु! आपके मंगल आशीर्वाद का अभिलाषी हूँ।

प्रस्तुत करते है 'दिवा सीरीज'

॥ मेरी भावना ॥

शास्त्रीय रागों पर आधारित इस सीडी में 'मंगलाचरण' 'मेरी भावना', 'आराधना पाठ' व 'समाधिमरण पाठ' सम्मिलित है। सुश्री श्रद्धा जैन द्वारा निर्देशित यह सीडी आपको धर्म लाभ करावे इसी उद्देश्य से इस सीडी को फिल्मी धुनों पर नहीं बल्कि शास्त्रीय रागों पर तैयार किया गया है। यह धर्म प्रभावना का सशक्त माध्यम है एवं गरिमामय स्तरीय उपहार भी जो किसी भी स्मृति व मंगल अवसर पर दिया जा सकता है। हम 'दिवा सीरीज' की इस प्रथम प्रस्तुति के लिये आपका आशीर्वाद व सहयोग की कामना करते हैं।

सम्पर्क : श्रीपाल जैन 'दिवा'
शाकाहार सदन : एल-75, केशरकुँज, हर्षवर्द्धन नगर, भोपाल - 03
मोबा.: 9977557313

महाकवि पंडित रइधू संगोष्ठी में विद्वानों के विचार

सिंधिया स्कूल के सीवर का पानी जैन प्रतिमाओं पर गिरने से मूर्तियों की मर्यादा भंग

(गंदा पानी मूर्तियों को नष्ट भ्रष्ट कर रहा है)

अखिल जैन समाज ग्वालियर

ग्वालियर 23 नवम्बर राजस्थान किसनगढ़ के प्रकांड विद्वान पंडित मूलचन्द्र लुहाड़िया ने महाकवि पंडित रइधू की साहित्य साधना एवं जैन प्रतिमाओं के निर्माण प्रतिष्ठा कार्यो को जैन संस्कृति की महान धरोहर बताया, कहा कि दुर्भाग्य से आज उनकी महान कृतियों की उपेक्षा हो रही है। विशाल जैन मूर्तियों पर ग्वालियर किले के उरवाई घाटी में सिंधिया स्कूल के सीवर का गंदा पानी बहकर मूर्तियों की मर्यादा, पवित्रता को भंग कर मूर्तियों का क्षरण कर रहा है जिससे प्राचीन जन संस्कृति नष्ट भ्रष्ट होकर क्षतिग्रस्त हो रही है। सिंधिया स्कूल वर्द्धमान मंदिर के निकट महाकवि रइधू की साधना स्थली के स्थान पर सिंधिया स्कूल में मांसाहारी केन्टीन बनाकर जैन मंदिर पर अतिक्रमण कर लिया है जिससे जैन धर्म के अनुयायी मंदिर में दर्शन पूजा से बंचित होने से अत्यंत दुःखी हो रहे हैं। समस्त जैन समाज एकजुट होकर संस्कृति की रक्षा हेतु तत्काल कार्यवाही करे। संगोष्ठी में आगरा के श्री मदनलाल बेनाड़ा, श्रीमती डॉ. कृष्णा जैन, श्रीमती डॉ. अल्पना जैन, श्रीमती डॉ. जया जैन एवं श्रीलालमणी प्रसाद जी ने अपने विचार महाकवि रइधू के साहित्य साधना पर व्यक्ति किये । महाकवि पंडित रइधू द्वारा ग्वालियर किले गोपाचल दुर्ग में अपभ्रंश भाषा में 35 ग्रंथों की रचना कर 15 वीं शताब्दी में एक लाख जैन ग्रंथों की प्रतिलिपियाँ हस्तलिखित कराके सम्पूर्ण देश में भेजी थी तथा 90 वर्ष तक दुर्ग में रहकर भट्टारकों जैन मुनियों के सान्निध्य में रहकर विशाल मूर्तियों मंदिरों की प्रतिष्ठा एवं साहित्य रचना कर ग्वालियर किले को महान जैन तीर्थ गोपगिरी, गोपाद्रि आदि नामों से सुशोभित कर सुमेर पर्वत के समान चारों ओर मूर्तियाँ बनाकर इसे महान तीर्थ सिद्ध क्षेत्र का गौरव प्रदान किया था। पंडित रइधू का सम्मान तोमर वंशी राजाओं ने हाथियों पर बैठाकर सम्पूर्ण वैभव के साथ किया था ऐसे महान विद्वान महाकवि साहित्यकार प्रतिष्ठाचारी आदि महान गुणों से शोभित महाकवि पंडित रइधू इतिहास में गौरवपूर्ण स्थान रखते हैं। इनके साहित्य एवं कृतियों का शासन एवं समाज को संरक्षण एवं प्रकाशन करके धर्म प्रभावना की जाना चाहिए।

परम पू. मुनि श्री १०८ आर्जवसागर जी महाराज ने महाकवि रइधू की साधना स्थली वर्द्धमान मंदिर का रास्ता स्वतंत्र कराने हेतु सभी को आशीर्वाद-प्रेरणा दी।

सिंधिया स्कूल में कैद है सैकड़ों साल पुराना वर्द्धमान मंदिर

विंध्य पर्वतमाला के आखिरी छोर पर ग्वालियर का दुर्ग तमाम दुर्गों की मणिमाला में एक उज्जवल मोती के रूप में निरूपित है। इस दुर्ग की चारुता, विशालता और ऊँची प्राचीरों को देखकर आश्चर्य होता है कि इस दुर्ग को किसने बनवाया? यह तो इतिहास के गर्भ में है। क्योंकि इतिहासकार एक मत नहीं हैं। पर जिसने भी इस स्थल को चुना होगा वह निःसंदेह दूरदर्शी था, तभी तो दुर्ग बहुत काल से न केवल अजेय वरन् आज भी अक्षुण्ण बना हुआ है। इस दुर्ग ने सदियों का इतिहास देखा है। पौराणिक काल में यह ग्वालिय ऋषि की साधना स्थली रही है। इस स्थल को गोपाद्रि, गोपाचल आदि के नाम से जाना जाता है।

दुर्ग निर्माण की कहानी महज ईटों तथा पत्थरों से बने विशाल महलों की कहानी नहीं है अपितु इसकी भव्यता विशालता व गरिमा वास्तुकला के उन आयतनों गुहा मंदिरों में से है जिनमें दिगम्बर जैन तीर्थकरों की प्रतिमाएँ शोभायमान हो रही हैं। दुर्ग के चहुँ ओर दृष्टिपात करने से ज्ञात होता है कि शिल्पियों ने पत्थरों में भी सजीवता भर दी है।

गोपाचल दुर्ग की 87 गुहा समूहों के लगभग 1500 जैन दिगम्बर प्रतिमाएँ उत्कीर्ण हैं जिनमें अधिकांश की पादपीठिका पर प्रशस्ति लेख में मूर्ति निर्माताओं का उल्लेख किया गया है। गोपाचल दुर्ग की प्राचीरों पर 87 गुहा समूह के 5 भागों में पंचतीर्थ के नाम से अतिशय तीर्थ रूप में मान्यता प्राप्त है। ये पंच तीर्थ हैं।

- **श्री दिगम्बर जैन अतिशय क्षेत्र सिद्धांचल तीर्थ** (उत्तर पश्चिम समूह जो इक्कीसवें तीर्थंकर नमिनाथ जी को समर्पित है।) भगवान नमिनाथ जी की मनोज्ञ अतिशय युक्त 23.5 फुट की अवगाहना वाली पद्मासन प्रतिमा अवस्थित है।
- **श्री दिगम्बर जैन अतिशय क्षेत्र त्रिशला गिरि** दक्षिण पश्चिम समूह, यह चौवीसवें तीर्थंकर वर्द्धमान महावीर को समर्पित है। यहाँ भगवान वर्द्धमान के चरण भी विद्यमान हैं।
- **गोपगिरि श्री दिगम्बर जैन अतिशय क्षेत्र बावनगजा** दक्षिण समूह, यह तीर्थ प्रथम तीर्थंकर भगवान आदिनाथ जी को समर्पित है। यहाँ भगवान आदिनाथ जी की 57 फीट अवगाहना वाली विशाल खड्गासन प्रतिमा अवस्थित है, जो अपनी विशालता के लिए सम्पूर्ण भारत वर्ष में प्रसिद्ध है।
- **श्री दिगम्बर जैन अतिशय क्षेत्र नेमिगिरि** (उत्तर पूर्व समूह) बाइसवें तीर्थंकर भगवान नेमिनाथ जी को समर्पित है। यहाँ पर गुहा में भगवान नेमिनाथ जी की लगभग 6 मीटर लम्बी और 6 मीटर चौड़ी अवगाहना वाली विशाल पद्मासन प्रतिमा विद्यमान है
- **श्री दिगम्बर जैन अतिशय क्षेत्र पार्श्वनाथ एक पत्थर की बावड़ी** दक्षिण पूर्व समूह, तेईसवें तीर्थंकर भगवान पार्श्वनाथ जी को समर्पित है। विश्व की सबसे विशाल 42 फुट ऊँची तथा 30 फुट चौड़ी श्री पार्श्वनाथ जी की अतिशय युक्त मनोज्ञ पद्मासन प्रतिमा विद्यमान है।

ये पंच तीर्थ जैन धर्म एवं संस्कृति के विशिष्ट प्रभाव को स्व सिद्ध करते हैं।

गोपाचल का अतीत अत्यंत समृद्धशाली रहा है। यहाँ की गौरवगाथा सदियों पुरानी है। यहाँ की पावन पुनीत धारा को तीर्थंकर नेमिनाथ जी के जन्म से पूर्व (यह श्री कृष्ण के चचेरे भाई थे) सुप्रतिष्ठित केवली ने निर्वाण प्राप्त कर आत्म कल्याण की सुरभि से महकाया था। इस कारण यह क्षेत्र निर्वाण सिद्ध क्षेत्र के नाम से जाना जाता है। ऐसा जैन साहित्य में उल्लेख प्राप्त होता है। अतएव गोपाचल दुर्ग महाभारत काल से पूर्व निर्वाण क्षेत्र था। डॉ. हरिवल्लभ माहेश्वरी जैसल ने भी इस तथ्य का उल्लेख किया है। जैन संस्कृति की गौरवता का एक और विशेष अवदान दुर्ग पर स्थित श्री वर्द्धमान महावीर का जैन मंदिर है, जो अपनी अवस्थिति से जन-जन को अभिप्रेरित कर रहा है।

सिंधिया पब्लिक स्कूल के निकट तीन मंजिला दिगम्बर जैन वर्द्धमान मंदिर विद्यमान है जो चौबीसवें तीर्थंकर भगवान वर्द्धमान स्वामी जी को समर्पित है। इसे यशोवर्मन के पुत्र आम ने बनवाया था। एक सौ हाथ ऊंचे इस मंदिर में उसने भगवान वर्द्धमान की विशाल मूर्ति स्थापित कराई थी। आर.सी. मजूमदार एवं ए.डी. पुसालकर के अनुसार राजा आम ने ग्वालियर में एक 23 हाथ ऊँची महावीर की प्रतिमा स्थापित की थी। श्री हरिहर निवास द्विवेदी लिखते हैं-आम ने बप्पभट्ट सूरी का शिष्यत्व ग्रहण किया और गोपगिरि पर एक सौ एक हाथ लम्बा मंदिर बनवाया जिसमें वर्द्धमान महावीर की विशाल प्रतिमा स्थापित की गई। बप्पभट्ट चरित तथा प्रभावक चरित से भी इस अनुश्रुति की पुष्टि होती है। तथा डॉ. मधुवाला कुलश्रेष्ठ, एल.बी. सिंह, नरेश कुमार पाठक, रवीन्द्र मालव, रामजीत जैन, एडवोकेट आदि का भी दुर्ग स्थित वर्द्धमान मंदिर के संदर्भ में यही अभिमत है।

सिंधिया स्कूल के निकट यह विशाल वर्द्धमान मंदिर पाँच मंजिल का पंच परमेष्ठी का प्रतीक हो सकता है इस मंदिर की तीन मंजिल अभी पूर्णतः विद्यमान हैं। चौथी मंजिल का आधा भाग दिखाई देता है। शेष भाग पाँचवी मंजिल एवं शिखर ध्वस्त हो चुके हैं। वर्तमान समय में यह मंदिर सिंधिया स्कूल के परिसर में विद्यमान है, इस मंदिर के बाह्य परिसर में स्कूल का खेल प्रांगण बना दिया गया है, मंदिर की कुछ मूर्तिया स्टेडियम के समीप तथा प्राचार्य निवास के गार्डन में रखी गई हैं। लाल बहादुर सिंह के अनुसार जैन प्रतिमाओं से अंकित एक ढोलाकार पाषाण खण्ड सिंधिया स्कूल (ग्वालियर दुर्ग पर) की रंगशाला में स्थापित है। उसके चारों और 48 जैन प्रतिमा ध्यान मुद्रा में बैठे हुए अंकित है। इसके ऊपर चौमुखी जैन प्रतिमा रखे होने का अनुमान कर माइकेल ने माना है कि इसमें कुल बावन (52) तीर्थकर अंकित रहे होंगे। इस आधार पर वे इसे नन्दीश्वर द्वीप मानते हैं और इसकी तिथि आठवीं शती ई. निर्धारित करते हैं किन्तु ज्योति प्रसाद जैन का मत है कि इसके ऊपर चौबीस (24) अन्य जैन प्रतिमाएँ उत्कीर्ण रही होंगी। इस प्रकार वे इसमें तीन चौबीसी अंकित होने का अनुमान करते हैं। इसी प्रकार तेइसवें तीर्थंकर भगवान पार्श्वनाथ जी की प्रतिमा सिंधिया स्कूल के परिसर में रखी है जो आठवीं शताब्दी की है।

सन् 1857 की क्रांति के पश्चात अंग्रेजों ने (अंग्रेज सेना ने) ग्वालियर दुर्ग को अपने आधिपत्य में ले लिया था। इस मंदिर का वृहद भाग जो क्षतिग्रस्त हो चुका था उसे हटाकर कलात्मक पाषाण खण्डों को अनेक भवन या दीवालों में चिनवा दिया गया, मंदिर का बहुभाग व अन्य प्राचीन स्थल अवशेष बैरक

(निवास) बनाने में नष्ट कर दिए। उन्हीं स्थानों में बने भवनों में सिंधिया स्कूल चल रहा है। सिंधिया स्कूल से संबंधित खेल मैदान में जाने वाले दर्शनार्थियों पर प्रतिबंध लगा दिया है जिससे अंदर जाकर दर्शन करना असंभव हो गया है। वैसे कम्पाउंड के बाहर से मंदिर के बाहरी भाग का दर्शन होता है।

वर्द्धमान मंदिर की वर्तमान स्थिति को स्पष्ट करते हुए स्व. श्री यशवंत सिंह गालव गाथा ग्वालियर दुर्ग का इतिहास में उल्लेख करते हैं कि यह तीन मंजिला मंदिर शिखर रहित है। मंदिर इस समय बिना मूर्ति के है किन्तु बाहर कुछ तीर्थंकरों की मूर्तियां इधर-उधर पड़ी हैं। मंदिर के प्रथम तल की दीवारें सादीं है। किन्तु ऊपर की दो मंजिलें चौकोर उभारों से बनी हैं जो बाहर हैं। मंदिर में कलात्मक कार्य विशेष नहीं है केवल सबसे ऊपरी मंजिल के द्वार पर कुछ शिल्प अवश्य है जो सम्पूर्ण ज्यामितिय मानों से आकार लेता हुआ उनकी दीवारों को छूता है। सभी द्वारों के सोहाबटियों पर मध्य में तीर्थंकरों की बैठी हुई मूर्तियाँ बनी हैं। मंदिर के शिल्प से ज्ञात होता है कि यह मंदिर दुर्ग के जैन चट्टान शिल्प के समय का होना चाहिए।

डॉ. हरिवल्लभ माहेश्वरी जैसल वर्द्धमान मंदिर के बारे में विवरण देते हुए लिखते हैं कि - ''यह एक जैन मंदिर है, जो जैन धर्म के चौवीसवें तीर्थंकर वर्द्धमान अर्थात महावीर को समर्पित था। इसका निर्माण 8 वीं सदी के लगभग आम नामक दुर्गपाल की वैश्य पत्नी ने करवाया था, जो जैन धर्म का पालन करती थी। इस मंदिर में ठोस स्वर्ण से बनाई गई वर्द्धमान की प्रतिमा थी। आगे विवरण देते हुए उल्लेख करते हैं कि वर्तमान में इस मंदिर के प्रांगण में सिंधिया स्कूल का खेल का मैदान है।''

वर्तमान में वर्द्धमान दिगम्बर जैन मंदिर के परिसर पर सिंधिया स्कूल के द्वारा आधिपत्य जमाये जाने से आन्तरिक भाग गर्भ गृह के दर्शन तो नहीं कर पाते हैं किन्तु सड़क पर ही खड़े होकर बाह्य भाग का अवलोकन एवं दर्शन कर हम समाधान कर लेते हैं। बाह्य भित्ती का अवलोकन करते हैं तो ज्ञात होता है कि मंदिर के प्रवेश द्वार के ऊपर ललाट बिम्ब में भगवान वर्द्धमान महावीर व पार्श्वनाथ की दिगम्बर जैन मूर्ति पद्मासन मुद्रा में विराजमान हैं जो दिगम्बर जैन मंदिर होने का स्वतः ही प्रमाण दे रही हैं कि वह मूलरूप से जैन मंदिर ही है। अन्य कुछ भी नहीं। मंदिर वेदी बन्ध को सामान्यतः खुर, कुम्भ, कलश, कपोत एवं सिंधिया स्कूल के प्रांगण में सम्मिलित कर बाह्य रूप में तारों की चारों ओर बाउन्ड्री निर्मित कर दी गई है जिससे इस मंदिर में प्रवेश करना दर्शनार्थियों के लिए प्रतिबंधित हो गया है, जो एक जैनियों और सर्व दर्शकों के प्रति अहित या अन्याय प्रदर्शित करता है।

इन पंचतीर्थों से संबंधित समस्त फोटो पत्रिका के मुख्य पृष्ठों पर अंकित है - संपादक

संदर्भ :

1. गोपाचल जिनेन्द्र पूजांजलि वृहद जिनवाणी संग्रह, पृष्ठ २०१
2. ग्वालियर इतिहास, संस्कृति एवं पर्यटन पृष्ठ १०
3. पोलिटिकल हिस्ट्री ऑफ नार्दर्न इंडिया फ्राम जैन सोर्सेज-गुलाब चन्द्र चौधरी, पृष्ठ २८ एवं अनेकान्त पत्रिका, अप्रैल १९७१ पृष्ठ १२१
4. दि एज ऑफ इम्पीरियल, कन्नौज, १९५५ बम्बई, पृष्ठ २८९-९४

5. तीर्थंकर महावीर स्मृति ग्रंथ एवं पर्यटन, पृष्ठ ३२५
6. जैन ज्ञान १९५
7. जैन संस्कृति संरक्षण व संवर्द्धन, पृष्ठ १०८
8. तीर्थंकर महावीर स्मृति ग्रंथ, ३३९
9. मध्यप्रदेश का जैन शिल्प पृष्ठ, १४३
10. ग्वालियर गौरव गोपाचल पृष्ठ, ८६
11. जैन संस्कृति संरक्षण व संवर्द्धन पृष्ठ, १०९-११०
12. गालव गाथा ग्वालियर दुर्ग का इतिहास पृष्ठ, ३१
13. ग्वालियर इतिहास, संस्कृति एवं पर्यटन पृष्ठ, ३३

डॉ. श्रीमती अल्पना मोदी

❖ ❖ ❖ ❖ ❖

हर युवा दिल का अरमान था कि काश ! मैं वहाँ होता

जयपुर ! अत्यंत भव्य एवं गरिमामयी मंच पर आचार्य श्री विद्यासागर जी एवं मुनिश्री क्षमासागर जी के मनोज्ञ चित्रों के समक्ष नीले गाऊन, नीले कैप और गोल्ड मैडल धारण किए प्रशस्ति-पत्र के साथ वे इतने आकर्षक लग रहे थे कि हर युवा दिल का यही अरमान था कि काश ! मैं वहाँ होता। यह सुअवसर था मैत्री समूह के तत्वावधान में मुनिश्री क्षमासागर जी की प्रेरणा से आयोजित देश के कोने-कोने से आई प्रतिभाओं के सम्मान का, जहाँ हर प्रतिभा अपने हम उम्र को प्रेरणा दे रही थी। 11 एवं 12 अक्टूबर 08 के इस दो दिवसीय आयोजन में धर्मस्थल के सुरेन्द्र कुमार जी हेगड़े कर्नाटक तथा डॉ. कुसुम पटोरिया नागपुर के मुख्य आतिथ्य में उपाधि प्राप्त सीनियर अवार्डियों का दीक्षांत समारोह हुआ एवं शिक्षा के क्षेत्र में सर्वोत्तम प्रदर्शन करने वाली देशभर की कोई 500 प्रतिभाओं का सम्मान भी।

मुख्य सम्मान समारोह दूसरे दिन दोपहर एक बजे आरंभ हुआ, जिसकी भव्यता, अनुशासन एवं गरिमा देखते ही बनती थी। सर्वप्रथम कक्षा 10 वीं एवं 12 वीं की आल इण्डिया मेरिट में रेंक पाने वाली तेजस्वी प्रतिभाओं को विशेष रूप से ड्रेस कोड में सम्मानित किया गया। कक्षा 10 वीं में आल इण्डिया मेरिट में छात्रों में पहला स्थान पाने वाले सुहास जैन बंगलौर (97.90%) एवं छात्राओं में अदिति एन. मुदहोल्कर नवी मुम्बई (95.60%) के साथ साथ कक्षा 10 वीं के कोई 200 मेधावी विद्यार्थियों का आत्मीय सम्मान किया गया। कक्षा 12 वीं विज्ञान में स्पर्श सिंघई कानपुर ने 90% अंकों के साथ आई.आई.टी. जे.ई.ई., ए. आई. ई. ई. ई. में चयनित होकर देश की मेरिट (छात्र वर्ग) में प्रथम एवं कु. नेन्सी जैन दमोह 94% अंकों के साथ छात्रा वर्ग में प्रथम पुरस्कृत हुई। इसके साथ ही कक्षा में कोई 60 छात्र-छात्राओं को भी सम्मानित

किया गया। कक्षा 12 वीं कामर्स में राहुल जैन अम्बाला 95.20% एवं कु. नेन्सी नवलखा 90.22% अंक के साथ एवं म.प्र. में पहली पोजीशन आल इण्डिया मेरिट में क्रमशः छात्र एवं छात्रा वर्ग में प्रथम स्थान पाकर सम्मानित हुए। इसके साथ ही कामर्स के कोई 90 मेधावी विद्यार्थियों का भी सम्मान किया गया। उसी क्रम में 12 वीं आट्र्स के कोई 20 विद्यार्थियों एवं विशिष्ट उपलब्धि वाली प्रतिभाओं को अतिथियों ने सम्मानित किया। इसके अतिरिक्त जयपुर के मेधावी प्रतिभाओं को भी पृथक से सम्मानित किया गया।

देशभर की होनहार 500 प्रतिभाओं का आत्मीय एवं गरिमामयी सम्मान अत्यंत प्रबंधकीय कौशल व अनुशासित ढंग से देख कर प्रतिभाओं के परिजन तथा अभिभावक भी अभिभूत हो कह उठे-बेमिसाल। समाजसेवी एवं प्रमुख उद्योगपति श्री पी.एल. बेनाड़ा ने मैत्री समूह एवं यंग जैना अवार्ड का परिचय दिया। श्री चंद्रसेन जैन भोपाल ने अपनी ओजस्वी कविताओं से खूब समाँ बाँधा। इस अवसर पर मुख्य अतिथि श्री सुरेन्द्र हेगड़े कर्नाटक ने यंग जैना अवार्ड के अनुशासित व्यवस्थित एवं भव्य आयोजन की खुले मन से प्रशंसा कर अपने यहाँ प्रोफेशनल कालेजों में ऐसे अवार्डियों के लिए सीटें आरक्षित करने एवं हर संभव सहायता देने की बात कही। उन्होंने कहा कि प्रतिभाएँ बिना किसी बात से डरे अपनी पढ़ाई पूरी लग्न से करें। डॉ. कुसुम पटोनिया नागपुर ने अपने संबोधन में सम्मानित प्रतिभाओं को शुभाशीष देते हुए समय के हर क्षण का उपयोग कर जीवन मूल्यों को अपनाते हुए आगे बढ़ने की प्रेरणा दी। अंत में श्री हेमंत सोमानी ने सभी का आभार माना। कार्यक्रम का सरस संचालन डॉ. सुमति प्रकाश जैन, श्री राजेश बड़कुल, छतरपुर एवं श्रीमती आभा जैन, जबलपुर ने किया।

दूसरे दिन के आयोजन के पहले सत्र में यंगजैना अवार्ड से पूर्व में सम्मानित हो चुकीं प्रतिभाओं को दीक्षांत समारोह में उपाधियाँ प्रदान की गईं। नीले-मोहक गाऊन-कैप में उपाधि प्राप्त करने वाली प्रतिभाओं में योगेन्द्र जैन नागपुर, पूजा पाटनी अजमेर, आलोक जैन मदनगंज, सिद्धार्थ जैन अजमेर, प्रेरक भाई शाह अहमदाबाद, आकाश शाह जयपुर, निकुंज जैन बुरहानपुर, रेशु जैन अशोक नगर, रिनी मोदी सागर, दिनेश जैन अम्बाह, प्रशांत जैन जयपुर, गरिमा जैन जयपुर, एकता जैन, अंकिता मोदी व सोनल बांझल अशोक नगर, निशी जैन बीना, नेहाकाला जयपुर, अंजना जैन, गढ़ाकोटा, यशस्वी जैन एवं अभय जैन जयपुर तथा रोहित पाटनी अजमेर शामिल थे। अतिथियों द्वारा चित्र अनावरण एवं दीप प्रज्ज्वलन के बाद श्रीमती आशिका पण्डया इंदौर के मंगलाचरण से इस सत्र का शुभारंभ हुआ। इस सत्र में डॉ. नलिन के शास्त्री गया ने मूल्य आधारित जीवन पद्धति एवं डॉ. प्रतिभा जैन, से.नि. विभागाध्यक्ष, राजस्थान विश्वविद्यालय जयपुर ने जीवन में अहिंसा का महत्व विषय पर सारगर्भित व्याख्यान दिया। इसके पूर्व प्रतिभाओं को 'कैरियर काउंसलिंग' भी विशेषज्ञों ने की। कार्यक्रम में आयोजन के पहले दिन हुई जैन क्विज स्पर्धा के दस विजेताओं को अतिथियों ने सम्मानित किया था तथा मुनिश्री क्षमासागर जी का संदेश श्री महावीर पण्डया ने हिन्दी में एवं श्री एस.एल. जैन ने अंग्रेजी में सुनाया, जिससे वातावरण भावुक हो उठा, क्योंकि यह पहला

अवसर था जब इस समारोह के प्रणेता मुनिश्री क्षमासागर जी सशरीर इस भव्य कार्यक्रम में उपस्थित नहीं थे, तब भी पूरे समारोह में हर वक्त, हर पल, हर कहीं उनकी अमूर्त उपस्थिति महसूस की जाती रही। मैत्री समूह का प्रत्येक सदस्य उनसे अदृश्य प्रेरणा व मनोबल पाकर प्रतिभा को सम्मानित करने की उनकी परिकल्पना को साकार करने में प्राणप्रण से जुटा रहा।

समारोह के पहले दिन दोपहर 1 बजे से शाम 5 बजे तक चले कार्यक्रम में देश के जाने-माने विद्वानों ने विभिन्न विषयों पर सारगर्भित व्याख्यान दिये एवं प्रतिभाओं के प्रश्नों के उत्तर दिये। इस कार्यक्रम का संचालन प्रो. सरोज कुमार इंदौर, ने किया। इसी दिन रात्रि में सभी प्रतिभाओं की विषयवार काऊंसलिंग के विविध सत्र आयोजित किए गये, जिनमें कक्षा 10 वीं एवं 12 वीं के छात्र-छात्राओं ने खुलकर अपनी जिज्ञासाएँ रखीं, जिनका समाधान विषय विशेषज्ञों ने बखूबी किया। मैत्री समूह की डॉ. निशा जैन ने आगन्तुक प्रतिभाओं, उनके परिजनों एवं अतिथियों का मैत्री समूह की ओर से आभार माना।

डॉ. सुमति प्रकाश जैन, छतरपुर

❖ ❖ ❖ ❖ ❖

श्री 1008 कल्पद्रुम महामण्डल विधान महोत्सव

सुप्रतिष्ठत केवली की मोक्ष स्थली गोपगिरि गोपाचल एवं ऋषि गालव की तपोभूमि ग्वालियर में हम सभी धर्मानुरागी बंधुओं ने प्रखर वक्ता धर्म प्रभावक परम पूज्य मुनि श्री आर्जवसागर जी महाराज एवं ऐलक अर्पणसागर जी महाराज से श्री 1008 कल्पद्रुम महामण्डल विधान हेतु निवेदन किया, मुनि श्री जी ने हम सभी को इस हेतु आशीर्वाद दिया। श्री 1008 कल्पद्रुम महामण्डल विधान महोत्सव दिनांक 1 अक्टूबर से 12 अक्टूबर 2008 तक जी.वाय. एम.सी. प्रांगण, सनातन धर्म मंदिर रोड, ग्वालियर में सम्पन्न हुआ। इस विधान को प्रतिष्ठा पितामह पं. गुलाबचन्द्र जी ''पुष्प'', प्रतिष्ठाचार्य, ब्र. श्री जय कुमार जी ''निशांत'', पं. मनीष जैन, टीकमगढ़, पं. चन्द्रप्रकाश जी ''चन्दर'', ग्वालियर तथा संगीतकार श्री हेमन्त कुमार एण्ड पार्टी, भोपाल द्वारा सम्पन्न कराया गया।

इस कल्पद्रुम महामण्डल विधान महोत्सव का महान उद्देश्य किले स्थित ''श्री वर्द्धमान जैन मंदिर'' एवं प्राचीन जैन संस्कृति की रक्षा करना है इससे जो आय होगी वह इन्हीं क्षेत्रों पर खर्च की जावेगी। आपसे अपेक्षा है कि वर्धमान जैन मंदिर का नया इतिहास रचने में आप भी हमारे सहभागी बनें और अपना अमूल्य सहयोग एवं स्नेह देकर नई चुनौतियों से जूझने की शक्ति प्रदान करें।

दिनांक 21 सितम्बर 2008 को प्रातःकाल श्री दिगम्बर जैन मंदिर, नया बाजार से मुनि श्री आर्जवसागर जी महाराज ससंघ की हजारों श्रावकों के साथ भव्य शोभा यात्रा बैण्ड बाजों के साथ चक्रवर्ती एवं प्रमुख पात्र हाथियों एवं बग्गियों में सवार होकर जी.वाय. एम.सी. प्रांगण पहुँची। मुनिश्री आर्जवसागर जी

महाराज के सान्निध्य में प्रतिष्ठाचार्य श्री जयकुमार जी निशांत, टीकमगढ़ द्वारा भूमि पूजन कराया गया। इसके बाद मुनिराज जी के मंगल प्रवचन हुए एवं प्रातः विधान हेतु पात्र चयन हुआ। सभी श्रेष्ठीजनों को भोजन कराने के पश्चात दोपहर में विधान के शेष पात्रों का चयन किया गया। जिसमें महायज्ञ नायक सिंघई महेश गुरु-शैलजा जैन, चक्रवर्ती अजय -राधा जैन, सौधर्म इन्द्र बाबूलाल-बदामी बाई, ध्वजा रोहणकर्ता बसन्त-मीना जैन, कुबेर विनोद-मीना जैन, ईशान इन्द्र सुभाष-शीला, सानत इन्द्र अक्षय-सरोज जैन, माहेन्द्र इन्द्र नरेन्द्र-सुधा जैन, यज्ञ नायक कपूरचन्द्र गेडावा तथा महामण्डलेश्वर, मण्डलेश्वर, मुकुट बद्ध राजा बने। सभी उपस्थित समुदाय ने भक्ति भावना से भगवान जिनेन्द्र देव की महा अर्चना की एवं मध्याह्न में कोपरगाँव की महिलाओं द्वारा नमोकार मंत्र की महिमा एवं दीप नृत्य प्रस्तुत किया गया। दिनांक 2 अक्टूबर 2008 को प्रातः मंदिर जी में देव आज्ञा, गुरु आज्ञा, प्रतिष्ठाचार्य निमंत्रण एवं यज्ञ पूजा करने के पश्चात बैण्ड बाजों एवं बग्गियों में पात्र सवार होकर मुनिवर के सान्निध्य में भव्य शोभा यात्रा के रूप में जी.वाय. एम.सी. प्रांगण पहुँची जहाँ पर ध्वजारोहरण कर्ता श्री बसंत जैन द्वारा ध्वजारोहरण किया, पं. जयकुमार जी 'निशांत' द्वारा वेदी शुद्धि समवशरण शुद्धि, सकली करण किया गया तथा मुनि श्री जी के समवशरण में बैठकर मंगल प्रवचन हुए। समवशरण में सामूहिक कलशाभिषेक, शांतिधारा, इन्द्र प्रतिष्ठा जिनबिम्ब स्थापना एवं पूजन विधान हुए, दोपहर में अहिंसा रैली निकाली गई, दोपहर 2 बजे मुनि श्री जी के विशेष प्रवचन, विश्व अहिंसा दिवस पर हुए एवं भारत के प्रतिष्ठा लब्ध कवि चन्द्रसेन जी, भोपाल के साथ करीब एक दर्जन कवियों द्वारा कवि सम्मेलन हुआ। शाम 6 बजे प्रतिदिन इन्द्र इंद्राणियों की हाथियों पर सवार होकर, बैण्डबाजों के साथ समवशरण में महाआरती हेतु जी.वाय. एम.सी. प्रांगण पहुँचे जहाँ संगीत के साथ मन भावन नृत्य के साथ जिनेन्द्र भगवान की आरती हुई। इसके पश्चात पं. गुलाबचन्द्र जी पुष्प के प्रवचन हुए। रात्रि 9 बजे से सांस्कृतिक कार्यक्रम जिनागम पाठशाला द्वारा एवं राजेन्द्र एण्ड पार्टी द्वारा श्रेष्ठ प्रस्तुती दी गई। दिनांक 3 अक्टूबर को दोपहर 3 बजे अंहिसा की विचार यात्रा भगवान ऋषभदेव से महावीर पर परिचर्चा हुई इसके बाद मुनिवर के प्रवचन हुए। दिनांक 2 अक्टूबर से 11 अक्टूबर तक दोपहर संगोष्ठी एवं सम्मेलन एवं मुनिश्री जी के प्रवचन तथा रात्रि में सांस्कृतिक कार्यक्रम जिसमें मण्डलेश्वर खरगोन द्वारा ''सत्यपथ की ओर सती अंजना'', की दयोदय ग्रुप, टीकमगढ़ द्वारा संगीतमय सांस्कृतिक प्रस्तुती दी गई, अगले दिन त्रिशला देवी महिला मण्डल नया बाजार ग्वालियर द्वारा ''मनोवती के गजमोती'' की श्रेष्ठ प्रस्तुती की। आखिरी दिन मनोज शर्मा एण्ड पार्टी दिल्ली द्वारा ''णमोकार मंत्र'' की महिमा विशेष प्रस्तुति, ''बोया पेड़ बबूल का, मतलब का संसार'' की सर्वश्रेष्ठ प्रस्तुति दी। दिनांक 2 अक्टूबर से 11 अक्टूबर 2008 तक होने वाली दोपहर संगोष्ठी एवं सम्मेलन में प्रतिदिन श्रेष्ठ एवं प्रसिद्ध वक्ता श्री गोपीलाल जी अमर, दिल्ली जी डी.ए. अध्यक्ष श्री जगदीश शर्मा, साडा अध्यक्ष श्री जयसिंह जी कुशवाह, भाजपा अध्यक्ष श्री अजय चौधरी आदि पधारे।

दिनांक 8 अक्टूबर 08 को श्रीमंत ज्योतिरादित्य सिंधिया जी, महाराज श्री आर्जवसागर जी महाराज

से आशीर्वाद लेने हेतु चेम्बर भवन पधारे। करीब एक घंटा चर्चा करने के पश्चात् श्री सिंधिया जी ने आश्वासन दिया कि जैन धर्म की आस्था का प्रतीक खेल मैदान के निकट वर्धमान जैन मंदिर पूजा अर्चना हेतु जैन समाज को दिये जाने के हित में निर्णय कराकर ही आपके दर्शन करने एवं आशीर्वाद लेने हेतु आऊँगा। दिनांक 12 अक्टूबर को प्रातः विधान पूजा सम्पूर्ण करने के पश्चात विश्व शांति महायज्ञ हवन हुआ इसके बाद मुनि श्री जी के मंगल प्रवचन हुए। दोपहर 1 बजे श्रीजी की विशाल भव्य शोभा यात्रा बैण्ड बाजों के साथ मुनिश्री जी के सान्निध्य में नगर गजरथ यात्रा प्रारम्भ हुई जिसमें चक्रवती एवं विशेष पात्र आदि गजरथ में एवं समस्त इन्द्र इन्द्राणी हाथियों एवं बग्गियों में सवार होकर ग्वालियर नगर के प्रमुख मार्गों हाईकोर्ट, दौलतगंज, बाडा, सराफा बाजार, स्वर्ण जैन मंदिर, गस्तका ताजिया, इन्दर गंज चौक होते हुए कार्यक्रम स्थल पहुँची जहाँ मुनि श्री ने कल्पद्रुम विधान की महिमा बताई एवं मंगल आशीष दिया। सभी सहयोगी महिला मण्डलों समितियों का सम्मान किया गया। प्रतिदिन किमिच्छिक दान रूप में गरीब लोगों को अनाज, वस्त्रादिक बाँटे गये। महायज्ञ नायक सिंघई महेशचन्द्र जैन गुरु द्वारा वात्सल्य नगर भोज दिया गया।

ग्वालियर नगर में प्रथम बार इतना भव्य एवं विशाल आयोजन हुआ जिसमें तमिलनाडु, देहली, भोपाल, झाँसी, टीकमगढ़, कोपरगाँव (महाराष्ट्र), दमोह, गुना, अशोक नगर, पथरिया, भिण्ड, मुरैना एवं अन्य जगहों से भारी संख्या में श्रद्धालुजन पधारे। श्री 1008 कल्पद्रुम महामण्डल विधान महोत्सव समिति आप सभी का आभार मानती है।

नरेन्द्र कुमार जैन, ग्वालियर

❖ ❖ ❖ ❖ ❖

मेहगाँव में वेदी प्रतिष्ठा एवं कलशारोहण महोत्सव सम्पन्न

मेहगाँव जिला भिण्ड में दिनांक 9 दिसंबर से 12 दिसंबर 2008 तक श्री 1008 भगवान चन्द्र प्रभु दिगम्बर जैन मंदिर के परम पूज्य संत शिरोमणि आचार्य श्री 108 विद्यासागर जी महाराज के परम प्रभावक शिष्य अध्यात्म योगी परम पूज्य मुनि श्री 108 आर्जवसागर जी महाराज एवं ऐलक श्री 105 अर्पणसागर जी महाराज के परम मंगल सान्निध्य में श्री नवीन वेदी प्रतिष्ठा एवं कलशारोहण महोत्सव और विश्व शान्ति महायज्ञ सम्पन्न हुआ। मंदिर जी में श्री इन्द्रसेन सुभाषचन्द जैन द्वारा नवीन वेदी का निर्माण तथा श्री शान्तिलाल धर्मेन्द्र कुमार जैन द्वारा शिखर हेतु कलशों का निर्माण कराया गया है। प्रतिष्ठाचार्य पं. मनीष कुमार जैन, शास्त्री टीकमगढ़ के निर्देशन में विधि-विधान पूर्वक इस महान अनुष्ठान को सम्पन्न कराया गया। श्री दिगम्बर जैन बड़ा मंदिर समिति एवं जैन मिलन मेहगाँव की संस्थाओं ने इस आयोजन में तन, मन, धन से सहयोग किया।

❖ ❖ ❖ ❖ ❖

भाव विज्ञान पत्रिका

✳✳ परम संरक्षक ✳✳

श्री गौतम काला, राँची
श्री वर्धमान विक्रमादित्य जैन, दैहरादून
श्री पदमराज होळल, दावणगेरे
श्री सोहनलाल कासलीवाल, सलेम
श्री संजय जैन, राँची

✳✳ संरक्षक ✳✳

श्री विजय अजमेरा, रीवा
श्री के सी जैन, डि. एक्साइज आ., छतरपुर

✳✳ आजीवन सदस्य ✳✳

श्री यू.सी. जैन, एलआईसी-दमोह
श्री जिनेन्द्र उस्ताद, दमोह
श्री नरेन्द्र जैन, सबलू दमोह
श्री निर्मल कुमार, इटोरिया
श्री संजय जैन, पथरिया दमोह
श्री अभय कुमार जैन, गुड्डे पथरिया, दमोह
श्री निर्मल जैन इटोरिया, दमोह
श्री राजेश जैन हिनोती, दमोह
श्री चंदूलाल दीपचंद काले, कोपरगाँव
श्री पूनमचंद चंपालाल ठोले, कोपरगाँव
श्री अशोक चंपालाल ठोले, कोपरगाँव
श्री नितिन मदनलाल कासलीवाल, कोपरगाँव
श्री चंपालाल दीपचंद ठोले, कोपरगाँव
श्री अशोक पापड़ीवाल, कोपरगाँव
श्री सुभाष भाऊलाल गंगवाल, कोपरगाँव
श्री तेजपाल कस्तूरचंद गंगवाल, कोपरगाँव
श्री सुनील गुलाबचंद कासलीवाल, कोपरगाँव
श्री श्रीपाल खुशीलचंद पहाड़े, कोपरगाँव
श्री शिखरचंद अशोक कुमार लोहाड़े, कोपरगाँव
श्री प्रेमचंद कुपीवाले, छतरपुर
श्री चतुर्भुज जैन, सब इंजीनियर, छतरपुर
श्री प्रदीप जैन, इनकमटैक्स, छतरपुर
श्री एम.के. जैन, लघु उद्योग निगम, छतरपुर
श्री रतनचंद देवेन्द्र कुमार बस वाले, छतरपुर
श्री कमल कुमार जतारावाले, छतरपुर
श्री भागचन्द जैन, छतरपुर
श्री देवेन्द्र डयोढ़िया, छतरपुर
अध्यक्ष, महिला मंडल, डेरा पहाड़ी, छतरपुर
अध्यक्ष, महिला मंडल शहर, छतरपुर
पंडित श्री नेमीचंद जैन, छतरपुर
डॉ. सुरेश बजाज, छतरपुर
श्री विनय कुमार जैन, टीकमगढ़
सिंघई कमलेश कुमार जैन, टीकमगढ़
श्रीमती संगीता बजाज (पत्नी श्री हरीश बजाज) टीकमगढ़
श्री संतोष कुमार जैन, टीकमगढ़
श्री अनुज कुमार जैन, टीकमगढ़
श्री सुनील कुमार जैन, सीधी
श्रीमती ओमा जैन, लश्कर ग्वालियर
श्रीमती केशरदेवी जैन, लश्कर ग्वालियर
श्रीमती शकुन्तला जैन, लश्कर ग्वालियर
श्री दिनेश चंद जैन, लश्कर ग्वालियर
श्री प्रमोश कुमार जैन, अशोक नगर
श्रीमती सुषमा जैन, लश्कर ग्वालियर
श्री ब्र. विनोद जैन (दीदी), लश्कर ग्वालियर
श्रीमती सुप्रभा जैन, लश्कर ग्वालियर
श्रीमती प्रमिला जैन, लश्कर ग्वालियर
श्रीमती मिथलेश जैन, लश्कर ग्वालियर
स.सि. श्री अशोक कुमार जैन, लश्कर ग्वालियर
श्रीमती मीना जैन, हरीशंकर पुरम, ग्वालियर
श्रीमती पन्नी जैन, मोहना, ग्वालियर
श्रीमती मीना चौधरी, लश्कर ग्वालियर
श्री निर्मल कुमार चौधरी, लश्कर ग्वालियर
श्री कल्याणमल जैन, लश्कर ग्वालियर
श्रीमती सूरजदेवी जैन, माद्योगंज, ग्वालियर
श्रीमती उर्मिला जैन, लश्कर ग्वालियर
श्रीमती विमला देवी जैन, लश्कर ग्वालियर
श्रीमती विमला जैन, माधोगंज, ग्वालियर
श्रीमती मोती जैन, थाठीपुर, ग्वालियर
श्रीमती अल्पना जैन, लश्कर ग्वालियर
श्रीमती रोली जैन, थाठीपुर, ग्वालियर
श्रीमती ममता जैन, माधव नगर, ग्वालियर
श्रीमती नीती चौधरी, लश्कर ग्वालियर
श्रीमती आभा जैन, चेतकपुरी ग्वालियर
श्रीमती सुशीला जैन, ग्वालियर
श्रीमती पुष्पा जैन, लोहिया बाजार, ग्वालियर
श्रीमती अंगूरी जैन, लश्कर ग्वालियर
श्री ओ.पी. सिंघई, ग्वालियर
श्रीमती मंजू एवं शशी चांदोरी, ग्वालियर
श्री सुभाष जैन, ग्वालियर
श्री खेमचंद जैन, ग्वालियर
वर्धमान इंग्लिश अकादमी, तिनसुखिया (असम)
श्रीमती सितारादेवी जैन, जबलपुर

त्रिशला गिरि ग्वालियर मोक्ष कल्याणक : एक दृश्य

आठवीं सदी का प्राचीन वर्द्धमान दिगम्बर जैन मंदिर,
किला परिसर-गोपगिरि, ग्वालियर

सिंधिया स्कूल के प्राचार्य निवास में
भगवान आदि नाथ की प्रतिमा

प्रथम मंजिल में भगवान पार्श्वनाथ
जी की आठवी सदी की प्राचीन प्रतिमा

आठवी सदी के मंदिर का चरण वंदन
करते हुऐं जैन श्रावकगण

अंग्रेजों के समय से लगी वर्धमान मंदिर की प्लेट
(वर्तमान में गायब कर दी गई)

सिन्धिया स्कूल परिसर में बिखरी जैन मूर्तियाँ, गोपगिरि, ग्वालियर दुर्ग

रजि. क्रं. MPHIN21331/12/1/2007-TC

57 फीट आदिनाथ जी की विशाल प्रतिमा
किले ग्वालियर पर

सिन्धिया स्कूल के प्राचार्य निवास में
भगवान आदिनाथ की प्रतिमा

सिन्धिया स्कूल परिसर में आठवीं सदी का
प्राचीन मंदिर किले दुर्ग पर

त्रिमंजिल (वर्तमान में आठवीं सदी का प्राचीन मंदिर)
पूर्व में पाँच मंजिला जैन वर्द्धमान मंदिर जी

सौजन्य से

श्री दिगम्बर जैन वर्षायोग समिति
2008
ग्वालियर

श्री 1008 कल्पद्रुम महामण्डल महोत्सव समिति
2008
ग्रेटर ग्वालियर

स्वामी, प्रकाशक एवं मुद्रक : श्रीमती सुषमा जैन द्वारा पारस प्रिन्टर्स, 207/4, सांईबाबा काम्पलेक्स, जोन-1, एम.पी. नगर, भोपाल से मुद्रित एवं एमआईजी-8/4, गीतांजली काम्पलेक्स, कोटरा सुल्तानाबाद, भोपाल (म.प्र.) से प्रकाशित।
सम्पादक - श्रीपाल जैन 'दिवा' एल-75, केशर कुंज, हर्षवर्धन नगर, भोपाल-3 (म.प्र.)